वीरांगना

अरुणा आसफअली

श्रीमती अरुणा आसफअली

वीरांगना से

पराधीनता की बेड़ी को ।
झटक झटक कर तोड़ रहीं ॥
एक ज्वाला बनकर तुम प्रकटीं ।
चिनगारी जिसकी फूट रहीं ॥

बालापनमें जोगन बनकर
जीवनको पलटाती थीं तुम ॥
अब बदल गया रुख ऐसा कुछ ।
भारतको पलटाती हो तुम ॥

संदेश लिए 'नारी मन' का ।
एकताको अपनाया तुमने ॥
हिंदू-मुस्लिमका भेद मिटा ।
रूढ़ियोंको ठुकराया तुमने ॥

एक नई क्रांति-देवी बनकर ।
एक नया प्रकाश दिया अरुणा ।
भारतकी नरक-यातनासे ।
उपजी तेरे मनकी करुणा ॥

तब उतर पड़ी जीवन पथमें ।
जीवनको छोड़कर रणपथमें ।
रणमें भी शांति वहाँ तो थी ,
झुँझलाई तब तुम रणमें ॥

कुछ नहीं समझमें आया तब ।
किस ओर बढ़े, कैसे लड़कर ॥
इस शांतिमयी रणभेरीसे ।
पायेंगे कैसे क्रांति अमर ?

तब वही मार्ग तुमने पकड़ा ।
अज्ञात बनीं भारत-ज्वाला ॥
भीतर ही भीतर सुलग सुलग ।
उभराया हिंदको रणबाला ॥

आज़ादीका वह नया मोल ।
बतलाना तुमने भारतको ॥
रण ही देगा आज़ादीको ।
दिखलाया तुमने भारतको ॥

'दर्शन'

वीरांगना

अरुणा आसफअली

संपादक
सुरेश गांधी

अनुवादक
द. गो. लाड 'दर्शन'

"अरुणा मेरी पुत्री है; भले ही यह विद्रोहिणी हो, या मेरे घरमें पैदा न हुई हो, पर मेरे लिए तो वह हर हालत में पुत्री ही रहेगी।"

—महात्मा गांधी,

वोरा एन्ड कंपनी पब्लिशर्स लिमिटेड,
३. राउंड बिल्डिंग, कालबादेवी रोड, बम्बई २.

प्रथम बार—अप्रैल, १९४६.

कीमत दो रुपये

मुद्रकः—के. पी. शाह ओरिअेन्ट प्रींटिंग हाउस, नवीवाड़ी, बंबई नं. २
प्रकाशकः—एम. के. वोरा. वोरा एंड कंपनी पब्लिशर्स लिमिटेड,
३. राउण्ड बील्डिंग, बंबई. २

विज्ञप्ति

आज कोई भी भारतीय वीरांगना अरुणासे अनजान नहीं, सब उसे जानते हैं, और एक गौरवके साथ। अज्ञातवास से प्रकट होनेके बाद भारतकी जनताको उन्होंने जो प्रोत्साहन दिया है वह उनके हृदयमें चिरस्मरणीय रहेगा।

मूल-लेखक (या सम्पादक) श्री सुरेश गांधी, राजनीतिक और विशेषकर क्रांतिकारी साहित्यसे विशेष परिचित हैं, इस विषयमें उनका अध्ययन भी पर्याप्त है: और वे ही इस पुस्तक के लिखनेके उपयुक्त अधिकारी हैं। जब मुझे पुस्तकका विषय और भाषाशैली रुच गई तो इच्छा हुई कि इस सामयिक और गौरवमय विषयसे हिन्दी-भाषी भी परिचित हों: सो यह अनुवाद आपके सम्मुख प्रस्तुत है।

मैं राजनैतिक साहित्यका विशेष जानकार नहीं, इसलिए मूल-पुस्तकको ज्यों की त्यों रहने देनेकी चेष्टा की है, आशा है पाठक इस सामयिक विषयको पाकर सन्तुष्ट होंगे।

बंबई
१२ अप्रेल १९४६

अनुवादक

विषय—सूची

पृष्ठ

विज्ञप्ति ७

१. अखिल भारतवर्षीय कॉंग्रेस अधिवेशनमेंसे अज्ञातवास... ६

२. भाषण... ... ... १६

३. अगस्त-प्रस्ताव ४५

४. जनआन्दोलन और उसके बाद ५७

५. बंगाल तथा अन्य प्रान्तोंमें आन्दोलनका असर ... ६६

६. अज्ञातवासकी यात्राएँ ८४

७. परिशिष्ट ६६

वीरांगना अरुणा

अखिल भारतवर्षीय कॉंग्रेस अधिवेशन में से

अज्ञातवास

चार सालके अज्ञातवासके बाद आज श्रीमती अरुणा आसफअली जाहिर होकर दिखाई दी हैं। १९४२ में अज्ञातवासी होनेके बाद वे पहिली बार कलकत्ताके देशबन्धु पार्कमें जनताके सामने प्रकट हुईं। उनके स्वागतार्थ वहाँ एक विराट सभाका आयोजन किया गया था, जिसमें उन्होंने कहा—'आजसे तीन महीने तक जनताकी शक्ति बढ़ानेके लिए विद्यार्थियों और आम जनताको ब्रिटिश मालके सम्पूर्ण बहिष्कारका कार्यक्रम हाथमें लेना चाहिए; कॉंग्रेस हिन्दुस्तानकी आज़ादीके लिए लड़ रही है, और कॉंग्रेसकी उस ताक़त को बढ़ाना आप लोगोंका पहला कर्तव्य है। कॉंग्रेस जनताकी संस्था है, और सन् १९४२ के अगस्तमें जनताने जो रास्ता अख्तियार किया था, आज कॉंग्रेसको भी उसी रास्तेसे आगे बढ़ना चाहिए। असेम्बलियोंके लिए प्रोग्राम बनानेवाले और बहुतसे लोग हैं, उनसे विद्यार्थियों और जनताका कोई सम्बन्ध नहीं। हमें महात्मा गाँधीने 'करो या मरो' का जो मूलमंत्र दिया था, वह आज तक हमारे कानोंमें गूँज रहा है और मैं उसी तरह जीना चाहती हूँ।

ब्रिटिश साम्राज्यवाद आज मरनेकी तैयारीमें है या शायद मर ही चुका है; लेकिन मरते मरते भी वह एक ऐसी दुर्गन्ध फैला रहा है जो लोगोंका गला घोंट रही है। अगर हमें ब्रिटिश साम्राज्यवाद पर आखिरी प्रहार करना हो तो बनी बनाई राजनीतिके बदले कुछ ऐसा काम कर दिखाना होगा जिससे भारत और ब्रिटेनका सम्बन्ध एक रातमें बदल जाय। वार्तालाप या मशविरोंसे समझौता करनेमें मुझे विश्वास नहीं है, क्योंकि मैं मानती हूँ कि

इस तरह जो समझौता होगा इसकी सम्पूर्ण सत्ता पूँजीपतियोंके हाथमें होगी।

वायसरायने केन्द्रीय असेम्बलीमें कहा है कि हिन्दुस्तानकी आज़ादीके लिए कोई तारीख़ निश्चित करनेमें मुझे समझदारी दिखाई नहीं देती। पर हम उनसे कहेंगे कि चाहे हम अगस्त आन्दोलनमें कामयाब न हुए हों, फिर भी तारीख़ निश्चित करनेका सवाल वायसरायके बूतेकी बात नहीं है। अगर आज हिन्दुस्तान सचमुच तैयार हो तो तारीख़ निश्चित करनेवाले लॉर्ड वेवल न होकर हिन्दुस्तानकी कटिबद्ध जनता वह दिन निश्चित करेगी। असैम्बलीमें वायसराय भले ही लम्बे-चौड़े भाषण करें, और उसके मेम्बरोंको भले व्यवहारकी सीख दें; पर मैं आज उन्हें और उनके देशवासियोंको ऐसी सार्वजनिक सभामें आकर भाषण करनेकी चुनौती देती हूँ। मै उन्हें असेम्बली के बँधेबँधाये मकानमें नहीं बल्कि यहाँ जनताके सामने आकर कुछ कहनेका चेलेंज देती हूँ।

सन् १९४२ की वीरांगना अरुणामें, जो कोमलांगीमेंसे क्रान्तिदेवी बनकर प्रकट हुई हैं, सरकारके लिए ज़रा भी संकोच या दुराव नहीं है। वे एक स्वदेशाभिमानी नारीके उपयुक्त, साफ़ साफ़ शब्दों और हृदयकी गहराईसे निकले हुए उद्गारोंको जनताके सामने प्रस्तुत करती हैं, जिसके अक्षर अक्षर में सत्य गूँज रहा होता है। देशकी आज़ादीका मुक्तिमन्त्र फूँकनेवालोंके लिए वाणीको सजाना व्यर्थ लगता है, क्योंकि उन्हें उस अलंकारके पीछे छुपानेके लिए कुछ भी नहीं होता। वाणीका अलंकार, वैभव या सुन्दरता उनके लिए नहीं है जो राजनीतिके साथ आज़ादीकी कशमकशमें अपने आपको डाल चुके हैं। जिसने देशके चरणोंमें अपना जीवन न्यौछावर कर दिया है उसके लिए पहली समस्या देशकी आज़ादी है, राजनीति बादकी चीज़ है।

सन् १८५७ की वीर नायिका झाँसीकी रानी थी, पर १९४२ की अगस्त क्रांतिकी नायिका वीरांगना अरुणा आसफअली हैं। किसी अपूर्व उपन्यासके निकलते हुए अध्यायों या प्रकरणोंकी तरह जिसका जीवन रोमांचक कार्यवाहियोंसे भरा हुआ है, वह निर्भय और विद्रोही तरुणी ऐसे किन तत्वोंसे

बनी हुई होगी ? आश्चर्य तो इस बातका है कि एक भारतीय संस्कृति और नारीत्वके अनुकूल कोमलता और सौंदर्य होते हुए भी, उनमें प्रखर विद्रोही की दृढ़ता और चेतनाकी प्रोज्ज्वल ज्वाला दहक रही है ।

बीसवीं सदीके आधीके .करीब बीत जाने पर भी भारतमें स्त्रियोंका स्थान कहाँ है ? क्या विवाहित स्त्रियाँ समाज या देशकी सेवा कर सकती हैं ? विवाह करना स्त्रीके लिए बाधक है या प्रगतिकारी ? ऐसे अनेक प्रश्नोंके जवाब हमें श्रीमती अरुणाके जीवनकी घटनाओंसे मिलते हैं ।

संसारके इतिहासमें, बीसवीं सदीकी अपनी एक .खास जगह है जो हमेशा याद रहेगी । यह सदी संघर्षकी है । सन् १८६६ से १६३६ तक छोटे और बड़े देशोंमें संघर्ष और युद्ध लगातार जारी रहा है; और साथ ही साथ इस शताब्दिमें नये और पुरानेकी क़ीमतोंमें जो भी परिवर्तन हुए हैं वैसे परिवर्तन और पुरावर्तन किसी भी कालमें नहीं हुए । हमें इस नये युगके परिवर्तनोंकी नई क़ीमत आँकनी होगी; आज श्रीमती अरुणाके जीवनके सहसा परिवर्तनने हमें और हमारे समस्त व्यक्तित्व दृष्टि, विचार और भावनाको उनमें जीनेवाले नारी गौरवका नित्य नया मूल्यांकन करनेके लिए आकर्षित किया है।

'सोत्साह' शब्द श्रीमती अरुणाके लिए उपयुक्त होगा । वे जो कुछ भी काम हाथमें लेती हैं, उसे वे सम्पूर्ण उत्साहसे सींचती हैं । अरुणाके लिए व्यर्थ जैसा कुछ भी नहीं है । सन् १६४२ के अगस्तके प्रथम सप्ताहमें ए. आई. सी. सी. के चिरस्मरणीय अधिवेशनमें वे अपने प्रख्यात पतिके साथ बम्बई आई थीं । उस वक्त प्रसन्नमुद्रा और आस्थाकी दृष्टिसे जब वे ए. आई. सी. सी. के मण्डपमें इधरसे उधर दौड़ती थीं तब उनकी जागृति और जीवन हमेशासे अधिक प्रोज्ज्वल लगता था । पुराने मित्रोंसे मिलती थीं, और नये नये मित्र बनाती थीं । उस वक्त किसे मालूम था कि यह कोमलांगी जो बिलकुल समाजकी पताका ही लगती थी, क्या उसके हृदयमें इतना आत्मबल होगा भी ? तब कौन जानता था कि यही महिला दूसरे दिनसे भारतके क्रांतिकारी संग्रामकी सेनानेत्री बनेंगी !

उनकी सफलताएँ हमारा ध्यान उस ओर आकर्षित करती हैं । उनके पति भी काँग्रेस कार्यसमितिके सदस्य थे । कमेटीकी गिरफ्तारीके बाद गोवालिया-

टैंक मैदानमें झंडावंदनके वक्त अरुणाने ही वहाँ मुख्य स्थान लिया था। मैदानमें प्रचंड जनसमूह एकत्रित हुआ था, पुलिसने सख़्तीके साथ जनताको वहाँसे बखेरनेका प्रयत्न किया। उसी दिन अश्रुगेस लाठी चार्ज और गोलीके हुक्म जारी हुए। उस वक्त बचावका ज़रा भी प्रयास किये बिना, जिंदगीकी ज़रा भी पर्वाह किये बग़ैर अरुणा जनसमूहके बीचमें जहाँ थीं, वहीं खड़ी रहीं और लोगोंको दृढ़ताके लिए मदद देकर उन्हें प्रोत्साहित करती रहीं।

पुलिसके .ज़ुल्मोंसे बहाये गये निर्दोष .ख़ूनने और जनताकी दुस्सह यातनाओंने उनकी मानसिक क्रांतिको भड़का दिया। उस वक्त पहले पहल उन्होंने राजक्रांतिमें क्रियात्मक भाग लिया। उस वक्तकी मुद्दत ९ वी अगस्त १९४२ से २६ वीं जनवरी १९४६ तक थी।

इस अवधिमें उन्होंने अज्ञातवासी क्रान्तिकारीका निम्न और आशंकित जीवन बिताया। आज एक नाम रखकर और कलसे किसी दूसरी ही उपाधिको रक्षा साधन बनाकर उन्होंने अपनी वह अवधि बिताई :उनके अज्ञातवासकी अवधिमें ही माताकी मृत्यु हुई और मृत्युके अन्तिम क्षणमें भी वे उनके पास न रह सकीं। विधिने मरती हुई माता और विद्रोही पुत्रीके बीच में यह कैसा अन्तर डाल दिया था?

उस पूरी अवधिमें ज़ासूसी पुलिस (C.I.D.) उनके पीछे लगी हुई थी। विदेशी सरकारने इनको तोड़-फोड़ करनेवाली क्रान्तिकारिणीके रूपमें घोषित किया और इनके पकड़नेवालेके लिए ५०००) का इनाम मुक़र्रर किया। हिन्दुस्तानके हर एक शहरमें उनको खोजने और पकड़नेके लिए आतुर होकर सरकारने अपने चतुर और योग्य जासूस, एंजेण्ट और सी. आय. डी. विभाग को उनके पीछे छोड़ा पर वे हमेशा ही उन सबोंसे अधिक सावधान और सचेत रहती थीं।

इस तरहसे उनके बारेमें बहुत-सी बातें प्रकाशित हुई हैं। एक बार उनके किसी अज्ञात-वासी साथीने उन्हें सूचित किया कि वे जहाँ रहते थे वह स्थान सुरिक्षित न था, और शीघ्रातिशीघ्र उन्हें वहाँसे भाग जाना चाहिए। ऐसे समय कहाँ जाना होगा?

सहसा उन्हें एक विचार सूझा; उसी दिन सवेरे अख़बारमें विज्ञापन प्रकाशित हुआ था कि एक अँग्रेज महिलाको एक ऐसी यूरोपियन स्त्रीकी ज़रूरत थी जो उस कुटुम्बके साथ रह सके। वे मोटरमें बैठकर जल्द ही उस जगह जा पहुँचीं। वह अँग्रेज महिला उनके व्यक्तित्व और सौदर्यसे इतनी प्रभावित हुई कि उसने अपनी 'यूरोपियन महिला' वाली शर्त छोड़कर उस जगह अरुणाको ही रख लिया। फिर एक बार यह रहस्यमय पंछी उड़ गया, यह खबर जब पुलिसको तलाश करनेपर लगी तब उसने सिर पीट लिया।

एक बार श्रीमती अरुणा संग्रहणीसे पीड़ित होकर बीमार थीं; उनका शरीर कष्टोंके कारण अस्थिपञ्जरमात्र रह गया था; धीरे धीरे पांडुरोग (पीलिया) भी घर करने लगा था। उस वक्त उन्हें समझाया गया कि वे अपने एक ज़मींदार मित्रके यहाँ रहकर इलाज ज़ारी करें; उनके अज्ञातवासी साथियोंके बहुत समझाने बुझाने और उनके इन्कार करनेके बाद बड़ी मुश्किलसे उन्होंने वहाँ जाना मंजूर किया और वहाँ गई।

दूसरे ही दिन उनके मेज़बानका कोई खास मित्र, जो एक बड़ा सरकारी अफ़सर भी था, पहलेसे किसी तरहकी ख़बर दिये बिना एकाएक वहाँ आ पहुँचा। उस कुनबेसे भीतरी सम्बन्ध होनेके कारण वह मित्र सीधा मकानके अन्दर चला आया और उसने उस मेज़बान और अपने अचरजके बीच उस विद्रोहिणी रमणीको अपनी आँखोंसे देखा।

एक मिनटके लिए बड़ी उलझन पैदा हुई, पर जल्दी ही अरुणाने बात सँभाल ली। उसने प्रसन्न-मुखसे उसका स्वागत किया, बैठनेकी जगह बताई और उसके साथ बातें करनेमें इस तरह मशगुल हुईंके मानो वे दिल्लीके अपने घरमें उसे मेहमान बनाकर बुलानेके बादे सुख दुखकी बातें कर रही हों। आखिर उलझन भरा वक्त किसी तरह निकल ही गया। उनकी बातें खुशमिजाज थीं। बातों ही बातोंमें उस अफ़सरने उठकर पुलिसको इस बातकी खबर देनेके बदले प्रसन्न होकर यह भी कहा कि उसे एक जीवित इतिहासके साथ थोड़ा वक्त बितानेका सौभाग्य प्राप्त हुआ था।

उनसे सम्बन्ध रखनेवाली बातों और सच्ची कहानियोंमें हमें सच्ची स्फूर्ति, साहस, और भ्रातृ-भाव दिखाई देता है। समय आनेपर ये बातें अपने

आप साबित हो चुकी होंगी, जिसे हर कोई जान सकेगा। उनकी ये कहानियाँ हमारे सामने उस व्यक्तित्वको पेश करतीं हैं जो रसमय होनेके साथ ही साथ साहसी भी है। जिन्हें श्रीमती अरुणाकी इन हिम्मतभरी घटनाओंसे आश्चर्य होता है वे यह भूल जाते हैं कि श्रीमती अरुणा एकाएक ही क्रान्तिकारी नहीं बनी। अरुणाको बचपनसे ही हुक्म करनेकी आदत थी। जब उनकी उम्र चौदह बर्षकी थी तब उन्होंने साध्वी (जोगन) बननेका विचार किया था; उस वक्त वे लाहौरकी कान्वेण्टमें पढ़ रही थीं। कन्वेंटकी सिस्टर सुपीरियर एक असाधारण स्त्री थीं। जो भी हो कोई उसके सम्पर्कमें आता, उसके अनोखे व्यक्तित्वसे प्रभावित होकर ही रहता था। सिस्टर छोटी-सी अरुणा गांगुलीको बहुत चाहती थी; और उसे जेसस और मेरीकी कहानियाँ बाइबलमेंसे कह सुनाती थीं। उसका कहना था कि दुनिया झगड़े और जंजालोंसे भरी हुई है; इसलिए विशुद्ध और श्रद्धामय जीवनकी श्रेष्टता आवश्यक थी। जव अरुणाने अपना छोटा-सा सिर घुमाकर माता-पिताके सामने अपना साध्वी बननेका विचार प्रस्तुत किया तो उन्होंने चिढ़कर उन्हें रोमन केथोलिक सम्प्रदायके विभागसे हटाकर छोटी बहन पूर्णिमाके साथ नैनीतालकी प्रोटेस्टेंट स्कूलमें दाखिल कर दिया। उस वक्त अरुणाने कितना ज्यादा विरोध किया होगा?

उसके बाद कई साल बीत जानेपर अरुणाने पुनः एक बार विद्रोह किया। माँ-बापने रूढ़ीके अनुसार इन्हें ब्याह देना चाहा, अरुणाने यह स्वीकार करनेसे इन्कार कर दिया। तब ही यह इच्छा भी यकायक उभर आई कि स्वतन्त्र रह कर और अपने पैरोंपर खड़ी होकर ज़िन्दगी बितानी चाहिए। कलकत्ते आकर इन्होंने लड़कियोंके गोखले मेमोरियल स्कूलमें शिक्षिका-पदपर नौकरीकी। इनकी इच्छा सिर्फ़ गुजर भर कर लेनेकी न थी बल्कि उच्च शिक्षा पानेके लिए इंगलैंड जानेके लिए रुपये बचाना भी था। कितनी अधिक महत्वाकांक्षी थी वे उस वक्त?

पर इसके लिए कुछ ही समयमें एक अप्रत्याशित लहर पूर्ण वेगमें आनेवाली थी। इन्हीं दिनों इनकी छोटी बहन पूर्णिमा इलाहाबादमें ब्याही।

छुट्टीके मौकेपर अरुणा छुट्टियाँ बितानेके लिए अपनी छोटी बहनके साथ इलाहाबाद गई। उस वक्त अरुणाके बहनोई मि. बॅनर्जीके एक मित्र उनसे

मिलने आये थे। वे ऑलइंडिया मुस्लिम लीगमें उपस्थित होनेके लिए कलकत्ता गये थे; वापस होते हुए थोड़े दिन इलाहाबाद भी रुके। कुछ ही वर्ष पहिले, उन्हें असहयोग आन्दोलनमें भाग लेनेके कारण १॥ सालकी सज़ा भी हुई थी। वे ख्यातिप्राप्त राष्ट्रसेवी और महत्वाकांक्षी वकील थे। उनकी प्रेक्टिस तेजीसे बढ़ रही थी। वे कवि थे, और बहुतोंको शक था कि वे अपने फ़ुरसतके समयमें कविता करते और पढ़ते रहते थे। उनका नाम था आसफ़-अली। अरुणाके साथ इनकी मुलाक़ात पूर्णिमाके मकानपर हुई। दो तेजस्वी प्रतिभाओंने दर्शन किये। वे एक दूसरेसे निकट परिचयमें आये, आपस की मित्रता दृढ़ हुई और सच्चा रोमान्स शुरू हुआ।

सन् १९३० और १९३२के असहयोग आन्दोलनके वक्त अरुणाने जेल-जीवन बिताया था। १९४२के ए. आई. सी. सी. के अधिवेशनके बाद सरकार की आँखोमें धूल झोंककर भाग निकलीं, और जेल जानेका तोहफा लिए बगैर प्रसिद्ध राष्ट्रसेवियोंकी पंक्तिमें आ गई।

उनकी पहली जेलयात्रा सरल न थी। सन् १९३० में दिल्लीके चीफ़-कमिश्नर उनके भाषणसे उबल उठे थे; यह भाषण सन १८५७ के विद्रोह पर था। ऐसा होनेपर भी सरकारने उनपर राजद्रोहके लिए नहीं बल्कि पिनल-कोडकी १०८ वीं धाराके अनुसार मुक़दमा चलाया। भले चाल-चलनका वचन देनेसे इन्कार करने पर उन्हें एक सालकी सज़ा हुई। हमारी सर्व सत्ताधारी नौकरशाहीकी कल्पनाशक्ति कुछ कम है ऐसा कौन कह सकेगा?

कुछ महीनोंके बाद गाँधी-इरविन समझौतेके फलस्वरूप सभी राजनैतिक क़ैदियोंको छोड़ दिया गया; पर अरुणा, छूटनेवालोंमें न थी। सन १९३१ में भी सरकारको उनका छोड़ना भयानक मालूम होता था! किंतु लाहौर के जनाना-जेलके कर्मचारियोंने आश्चर्यसे देखा कि अगर अरुणाको न छोड़ा गया तो सब स्त्री क़ैदी भी वहाँसे बाहर जानेको इंकार कर रही थीं। यह ज़िद सुबह ६ से रातको आठ बजे तक चालू रही। अंतमें गाँधीजी और डा. अन्सारीने यह हठ छोड़ देनेके लिए तार किया, और श्रीमती अरुणा जेलमें बिना साथियोंके अकेली ही रहीं। फिर भी उस वक्त लोगों को दिखाने के लिए उन्हें छोड़ दिया गया। उनके जेलके बाहर पैर रखते ही ख़ाँ

अब्दुलगफ्फ़ारखाँ और दूसरे मित्रगण उनका स्नेह स्वागत करनेके लिए तैयार खड़े थे।

दिल्ली डिस्ट्रीक्ट जेलमें उन्हें रखा गया था। वहाँ भी राजनैतिक कैदियों के साथ अनुचित व्यवहारके कारण विरोध शुरू हुआ। श्रीमती अरुणाने भूख हड़ताल प्रारंभ की और अत्यधिक अस्वस्थ होनेपर भी उन्होंने उपवास न छोड़ा। आखिरकार नौकरशाहीको उन राजनैतिक कैदियोंकी माँग के आगे झुकना पड़ा। पर नौकरशाहीने अपने बैरका बदला लिया। उन्हें अम्बाला ले जाया गया; वहाँ स्त्रियोंको जेल न होनेके कारण एकान्तमें रखा गया।

उसके बाद खास जानने लायक बात यह है कि—उसके बाद दस बरस तक उन्होंने राजनैतिक संग्राम विशेष रूपसे रचनात्मक हिस्सा न लिया, सिर्फ अखिल भारतीय स्त्री मंडलको लेकर ही कार्य प्रवृत्ति की। ये वर्ष पर्याप्त पढ़ने, अभ्यास और मनन करने के ही थे, जिससे वे आगामी संग्रामके लिए तैयार हो सकें। वे बहुत नजदीकसे कांग्रेसकी कमियोंको देख रही थीं। वे भी पण्डित जवाहरलाल नेहरूकी तरह कई बार कांग्रेसके उच्च सिद्धान्तोंको एक ओर रख देती हैं। वे कहती हैं कि 'हम कांग्रेसके मार्गमें बाधक बनना नहीं चाहते, पर बम्बई और कलकत्तामें घटी हुई ताज़ी घटनाओंके कारण जब हमारे स्वाभिमानका प्रश्न सामने आता है, तब मैं यही ठीक समझती हूँ कि उस वक्त हम उन उच्च सिद्धान्तोंको उज्ज्वल भविष्यके लिए छोड़ दें।

इस तरह उन्होंने आज़ादीके लिए अपनी खुदकी रीति और पद्धतिसे नये कार्यक्रम तैयार किये। 'भारत छोड़ो' के भीषण दिनोंमें उन्हें अपने कार्यक्रम को आज़मानेका मौक़ा मिला, साथ ही साथ उन्हें जयप्रकाश नारायण, अच्युत पटवर्धन, राममनोहर लोहिया और कई अप्रसिद्ध बल्कि शक्तिशाली व्यक्तियोंका साथ भी मिला। अरुणाने सिर्फ उन लोगोंमें उच्च स्थान ही प्राप्त नहीं किया बल्कि उनकी शुभाकांक्षाएँ भी उनके साथ थीं। उनकी अदम्य निडरता और साहसमें भारतके इतिहासमें एक अद्भुत अध्याय जोड़ा है। आज तक श्रीमती अरुणा, आसफअलीकी पत्नीके रूपमें पहिचानी जाती थीं, पर अब उनकी कीर्तिमय प्रतिभा देखते हुए संभव है कि भविष्य

में आसफअली श्रीमती अरुणाके पतिके रूपमें पहिचाने जायँगे।

करीब चार वर्षके अज्ञातवासके बाद जब उन्होंने कलकत्तामें पैर रखा, उस दिन तीसरे पहर इंडियन एसोसिएटेड प्रेसके एक संवाददाताने उनसे मुलाक़ात की थी। अपनी छोटी सी बात चीतमें उन्होंने बताया कि "मेरे कार्योंके प्रशंसाके पुल बाँधना ठीक नहीं है; मैंने जो कुछ किया है वह मेरे कर्तव्यका ही एक हिस्सा था। यह सब आज़ादीके जंगका ही एक रूप था। मैं फिरसे निश्चित रूपसें कहती हूँ कि मैं कुछ शहीद नहीं हूँ। यह समय आंतरिक या व्यक्तिगत विषयोंको लेकर बैठनेका नहीं है। इसलिए ऐसी बातों को रहने देना ही ठीक है। इन गये चार वर्षोंमें मुझपर क्या क्या और किस तरह बीता यह मैं अभी नहीं बताऊँगी। मेरे नामका वारंट रद्द हो जानेसे मुझे ज़रा भी खुशी नहीं है। दयाके टुकड़े फेंककर छुटकारा कर देनेमें न तो बड़प्पन हैं न बुद्धि ही। ऐसी बातका कुछ अर्थ ही नहीं। पर और इससे ऐसा भी ज्ञात नही होता कि सरकारकी नीतिमें कुछ परिवर्तन हुआ होगा। पर हम सरकारसे उदारताकी भी आशा नहीं रखते। हम शांतिपूर्वक बैठ सकेंगे ऐसा हमें विश्वास नहीं है, और हम सरकारको भी शांतिसे नहीं बैठने देंगे।

साथ ही साथ श्रीमती अरुणाने यह भी बताया कि 'जो लोग अभी तक जेलके सीखचोंके पीछे पड़े हुए है, या गुप्तरूपसे इधर उधर भटक रहे हैं, हमें उनके लिए बहुत दुःख है। मेरा वारंट रद्द होने से शायद मेरा कार्य कुछ सरल हो जाय। इन गये चार वर्षोंमें भी मैंने अपना काम जारी रखा था और अब अधिक स्वतन्त्रतासे वैसा करना मेरे लिए संभव होगा; मुझमें और मेरे अज्ञातवासी मित्रोंमें इतना ही अन्तर है। दूसरे दृष्टिसे तो मेरा प्रकट होना किसी खाईसे बाहर आने जैसा ही है।

हम यह नहीं जानते कि श्रीमती अरुणा किन तत्वोंकी बनी हुई हैं, फिर भी इनके जेल जीवनके प्रारम्भसे अबतक के इनके जीवनको ध्यान पूर्वक देखनेसे मालूम होता है कि उनमें कोमल और मृदु हृदय होते हुए भी वह वक़्त आनेपर पाषाणसे भी अधिक कठोर और उग्र बन सकता है। किसी भी सिद्धान्तने आज तक उन्हें अंधी बनाकर न झुकाया, अपने मनकी आवाज़

को ही पहला मानकर उन्होंने आगे क़दम बढ़ाया है। वे उच्चसे उच्च व्यक्तिको भी सच्ची बात कहनेमें नहीं हिचकिचातीं। इनमें सबसे बड़ा गुण 'आत्मलोपन' है; कभी भी इन्होंने अपने आपको महत्व नहीं दिया। आज तक जगह जगह दिये हुए भाषणोंमें यह वस्तु हमें स्पष्ठ रूपसे दिखाई देती है।

इन सब बातोंके सिवा यह बात सबसे बड़ी है कि इनका मन विद्रोही है, साथ ही साथ स्फूर्ति, बुद्धि और कुशलताने उनके अज्ञात वासी जीवनमें महत्व पूर्ण भाग निभाया है। सन १६४२के आन्दोलनकी अनेक रोमांचकारी कथाएँ इस विदुषी वीरांगनाके आसपास घटी हैं। इस रमणीकी गिरक्तारीके लिए सरकारने आकाश पाताल एक कर दिया था, जो उनकी आँखोंमें किरकिरीकी तरह चुभती थी। इनके सब वारंट रद्द हो जानेके बाद इंडियन एसोसिएटेड प्रेसके प्रतिनिधिकी मुलाक़ातमें जो कुछ कहा था वह ऊपर बता दिया है। किन्तु उनके अज्ञातवासकी कौतुक भरी घटनाएँ भी विभिन्न अख़बारोंके द्वारा प्रकाशित हुई थी। एक अख़बारके अनुसार जब केप्टन बरहानुद्दीनपर मुक़दमा चल रहा था तब वे लाहौरमें थीं। कुछ दिनों बाद पेशावर भी गईं। शिमला सम्मेलनके वक़्त वे शिमलामें ही थीं; और कांग्रेस कार्य समिति के बंबई अधिवेशनके वक़्त वे बंबईमें ही उपस्थित थीं। कलकत्तेमें कांग्रेस कार्यसमितिकी बैठकके समय वे अपने पति बैरिस्टर आसफअलीसे मिली थीं।

इस समयमें गुप्त पुलिसने उनकी गिरफ्तारीके प्रयत्न जारी रखे थे। कांग्रेस कार्यसमितिके बंबई अधिवेशनके समय पुलिसको अरुणाकी उपस्थितिकी गंध आई थी, फिर भी पकड़नेके नामपर उन्हें असफलता मिली। पहले जब श्री जयप्रकाशनारायण और श्रीमती अरुणा कलकत्तेमें साथ थे, तब भीं वे गिरफ़्तार होनेसे बच गये थे।

*

भाषण

उनके अज्ञातवासपरसे पर्दा उठ जानेके बाद वे थोड़े दिन कलकत्तेमें ही रहीं, और वहाँसे दिल्ली गईं। महात्मा गांधीकी कट्टर अनुयायी होनेके बावजूद भी वे समाजवादको मानती हैं। महात्मा गांधी द्वारा प्रदर्शित रचनात्मक कार्यक्रमका उनके हृदयमें बहुत ऊँचा स्थान है; महात्माजी के विचारों को उन्होंने अपने जीवनमें उतार लिया है। इस वक्त जबकि ब्रिटेन युद्धोत्तर पुनर्निर्माणमें व्यस्त हो रहा है, और वहाँके पूँजीपति अपने उद्योगों और यन्त्रोंको फिरसे जारी करनेमें लगे हैं, ऐसे अवसरपर श्रीमती अरुणाने हमारे राष्ट्रवासियोंसे गांधीजी द्वारा वर्षों पूर्व बनाये हुए रचनात्मक कार्यक्रम करनेका अनुरोध किया है। उन्होंने जनताको आने वाले संघर्ष और समय के आकस्मिक परिवर्तनसे सचेत कर दिया है; उन्होंने जनतासे ज़ोरदार आग्रह किया है कि वह ब्रिटिश कारखानोंमें तैयार होकर यहाँ आनेवाले माल का फिर एक बार संपूर्ण बहिष्कार करे।

जब दिल्लीकी जनताने उनका सोत्साह स्वागत किया. तब उनके द्वारा समर्पित किये गये मानपत्रके जवाबमें अरुणा ने उपर्युक्त आदेश जनताको दिया था। उन्होंने कहा कि—'भारतकी आज़ादीके प्रश्नपर ब्रिटेनके साथ समझौता हरगिज़ नहीं होना चाहिए; भारत खुद अपनी आजादी उनके हाथोंसे छीनकर लेगा।'

जब श्रीमती अरुणा, दिल्ली कांग्रेस कमेटी द्वारा आयोजित उस विराट सभामें उपस्थित हुई थीं तब हल्के नीले रंगकी साड़ी पहनी थीं; उनकी अलकें हवामें उड़ रही थीं, उनके चेहरेपर मुस्कराहटके स्थानपर गंभीरता छाई थी। जनता उनको देखकर आनन्दित हो रही थी, करीब चार सालके अज्ञातवासके बाद भारतकी जनताको अपनी इस वीरांगनाके बारेमें कई रोमांचक बातें सुननेको मिलीं। जनता उसे सुननेके लिए आतुर हो रही थी। इसी सिलसिलेमें उन्होंने कहा था कि—'सरकार भारतकी आज़ादीकी भावनाको

दमनसे दबा देनेकी बातें करती थी, पर इतने जुल्मोंके बावजूद भी वह उसे दबा नहीं सकी है। सरकार अब तक जनताकी शक्तिका परिचय न पा सकी थी। सन १६४२ में जनताने अपना बलिदान करके ब्रिटिश सेनाकी गोलियों को अपने सीनोंपर झेला। मेरी साढे तीन सालके अज्ञातवासकी कहानी आजादीकी कहानी है: मैं उसकी एक प्रतीक हूँ। हम ब्रिटेनके साथ समझौता नहीं चाहते। हम सिर्फ़ असेम्बलियोंमें ही सरकारसे न लड़ेंगे, बाहर भी हमारा स्वातन्त्र्य संग्राम जारी रहेगा। लोग १६४२ की जनक्रांतिको भूले नहीं हैं, एक दिन ऐसा आयेगा कि हम दिल्लीकी सेक्रेटरिएटपर अपना झंडा फहराएँगे, और अपने हाथोंसे ब्रिटिश नौकरशाहीकी व्यवस्था नेस्त-नाबूद कर देंगे। पर हमारे उस रास्तेमें बहुत सी बाधाएँ आयेंगी। ब्रिटिश वायसराय और ब्रिटिश सेना हमारे रास्तेकी पहली अड़चनें होगी। पर हम हिन्दू-मुस्लिमोंको एक होकर मजदूर और किसानोंका राज्य स्थापित करना होगा।'

अन्तमें उन्होंने विद्यार्थियोंसे ब्रिटिश मालके बहिष्कारका आन्दोलन करनेका अनुरोध किया कहा कि बंगालके अकालका ज़िम्मेदार सड़ा ब्रिटिश शासनतन्त्र ही है; अगर भारतमें ब्रिटिश माल आयेगा तो भारतीय उद्‌योग और पूँजीकी स्थिति बहुत खराब हो जायगी।'

दिल्लीके बाद वे नागपुर गईं; वहाँ भी जनताने उनका असीम स्वागत किया। नागपुर कांग्रेस कमेटी द्वारा आयोजित नागपुरके नागरिकोंकी एक विराट सभामें सभापतिके स्थानसे श्रीमती अरुणाके स्वागतमें श्री दीनदयाल गुप्तने उनके यशस्वी जीवनके वर्णनमें कहा कि 'सन् १६४२की अगस्त क्रान्ति में नागपुरकी जनताने जितना आत्म-बलिदान किया है हम उन्हें अपनी श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हैं; श्री. गुप्तने यह भी कहा कि आनेवाले स्वातन्त्र्य-संग्राममें भी नागपुरकी जनता श्रीमती अरुणाके पद-चिन्होंपर ही चलेगी।

'अरुणाकी वाणी, हुंकारकी प्रतिध्वनि है। उनके मानसिक विश्वासका प्रतिबिम्ब उनके निडर दृढ़ और क्रान्तिकारी स्वभावपर भी पड़ा है। यद्यपि अगस्त-आन्दोलन, काँग्रेसकी अहिंसा नीतिसे कुछ दूर था फिर भी वह हिंसा

भारत-सरकार द्वारा किये गये .ज़ुल्मों और हत्याकाण्डोंकी तरह भीषण और .खूनसे सनी हुई न थी। वह भारत-सरकारके शासन-व्यवस्थाका एक प्रतिकार मात्र था। फिर भी १८५७ की बङ्गाल-क्रान्तिकी तरह इस बार किसी मोटे अफ़सरका खून नहीं किया गया, और न सरकारके विरुद्ध बम वग़ैरहका षडयन्त्र ही रचा गया था। यह प्रतिकार सिर्फ सरकारकी शासन-व्यवस्थाके विरुद्ध किया गया था।

जब नागपुर छोड़नेके बाद, वर्धाके नागरिकोंने श्रीमती अरुणाका भव्य स्वागत किया, तब उन्होंने उस विराट जनसमूहको सम्बोधित करके, वायसरायके उस वक्तव्यका उल्लेख किया जिसमें वायसरायने क्रांति और आन्दोलन की आलोचना करके उसे सामूहिक हिंसाका रूप दिया था। उन्होंने वायसराय के उस वक्तव्यका योग्य उत्तर देते हुए कहा कि—'वेवलकी सरकारको यह पूछनेका ज़रा भी अधिकार नहीं है कि हम हिंसाका आश्रय लेते हैं या अहिंसा का; क्योंकि उसके हाथ खूनसे सने हैं। महात्माजी भले ही इस बारेमें अपना खुलासा कर सकते हैं।' उन्होंने कहा कि 'भारत छोड़ो' की आवाज़ उग्र बनती जा रही है। शासनकी बेवकूफी और बदनियतीके कारण अनाजकी कमी से जनताके सामूहिक मरणका प्रश्न सम्मुख खड़ा है। यह अकाल बंगालके अकालसे कई गुना बड़ा होगा। भारत भरमें व्यापक रूपसे अकाल अपना मुँह बाये खड़ा है।...पर हमें मौतकी राह नहीं देखनी चाहिए। हमें किसानोंको सचेत कर देना चाहिए कि वे नौकरशाहीके धोखेमें आकर अपना अनाज न दें बल्कि गाँवोंमें ही अनाजका संग्रह करके पंचायतके द्वारा उसके उपयुक्त और समान रूपसे बँटवारेकी व्यवस्था करें। इस तरह हमें भारतको भूखों मार डालनेके लिए कटिबद्ध वेवलके शासनतंत्रको चुनौती देनी चाहिए। अगर काँग्रेस चाहे तो देशमें वह समान सत्ताके रूपमें खड़ी हो सकती है। राष्ट्रकी ऐसी कठिन परिस्थितिके वक्त ब्रिटिश शासनका साथ देने से हम उसके गठबंधनको और मजबूत बनाएँगे। १९४२ के सूत्रको याद कीजिए। रोटीके लिए किया जानेवाला आन्दोलन, आज़ादीका आन्दोलन है। अनाजका एक भी कण हमें शासकको खिलानेके लिए नहीं देना है, और न

एक पाई ब्रिटिश मालको ख़रीदनेमें खर्च करनी है। अन्तमें उन्होंने यही कहा कि 'हमारे सामने दो रास्ते खुले हुए हैं—'अकालके कारण मौतके मुँहमें जाना, या ब्रिटिश सरकारके हाथों गुलामीमें सड़ना ; ये दो बातें हैं। इन दोनोंमेंसे हमें किसी एकको पसन्द करना है। मैं तो आपको लड़ते लड़ते वीरतापूर्वक मौतसे मिलनेका ही आग्रह करूँगी, दुश्मनके हाथों पतित होनेके लिए नहीं कहूँगी।'

वर्धाकी उस विराट सभामें जब वे भाषण करनेके लिए खड़ी थीं, तब डॉ. महोदयने उनके गलेमें मालाएँ डालीं। इस प्रसंगमें उन्होंने कहा कि 'यह मान मुझे नहीं मिला, बल्कि उन स्वातन्त्र्य सैनिकोंको मिला है जो अच्युत पटवर्धनकी तरह अब भी अज्ञातवास बिता रहे है, उन जयप्रकाश नारायण और राममनोहर लोहिया जैसे देशभक्तोंको मिल रहा है जो अभी तक जेलोंमें सड़ रहे हैं। इतना ही नहीं, यह सम्मान उन्हें भी मिल रहा है, जो अगस्त क्रांतिमें देशभक्तिके नामपर ब्रिटिश दमनके शिकार हुए थे। जहाँ तक आज़ादी न मिले, हम शान्तिपूर्वक न बैठेंगे।

जनताको सम्बोधन करके उन्होंने इस बारके अंतिम संघर्षका संकेत करते कहा—सरकारके .ज़ुल्म हमारे जोशको रोक नहीं सके। हमारी भीतरी आग इस वक़्त जो भी कुछ धीमी है फिर भी समय आनेपर वह फिर दहक उठेगी।

उसके बाद उन्होंने अगस्त क्रांतिके कार्य प्रदेशका विस्तृत विवरण बतलाते हुए कहा,—"क्या यह कहना सच नहीं है कि अज्ञात् स्थानोंसे हमें प्रोत्साहन या सहायता न मिली था; अगस्त क्रांतिमें भागलपुर, सतारा, संयुक्तप्रान्त वगैरह ने महत्वपूर्ण काम किया है। हम जेलोंमें भरे जानेके बजाय बाहर रहकर आज़ादीकी मशाल लेकर देशसेवा करना चाहते थे। .ख़ूनसे सनी हुई सरकारको यह पूछनेका अधिकार नहीं है कि हिंसक हैं या अहिंसक ? यह पूछनेका अधिकार महात्मा गांधीको है। हम लोगोंको वीरोंकी अहिंसाका पाठ सिखाया गया है। यदि हमने अब तक गांधीजीकी अहिंसाको ठीक ठीक समझकर अपनाया होता तो हम अब तक स्वतन्त्र हो गये होते।

हम हिंसक थे या अहिंसक इसका न्याय मैं सरकारसे नहीं बल्कि जनता से कराना ज़्यादा पसन्द करती हूँ। हमारे बापूजी जब आगाखाँ महलमें उपवास कर रहे थे, तब भी हम लाचार थे।

आप लोग यह न समझ लें आगामी चुनावोंके बाद स्वराज्य आ जायगा, आप लोगोंको अब भी आनेवाले संघर्षके लिए तैयार रहना चाहिए। कुछ ही समयमें ब्रिटिश सरकार हम लोगोंपर अपना माल लादनेकी कोशिश करेगी, पर उस मालका आप लोगोंको बहिष्कार करना चाहिए। सरकारके इस दूसरे मोर्चेसे हमें इस तरह लड़ना है, कि ब्रिटेन स्वयं पैरोंमें गिरता हुआ आये। अन्तमें उन्होंने महिलाओंसे भी आज़ादीकी लड़ाईमें कूद पड़नेका सन्देश देते हुए कहा कि आष्टी और चिमूरमें जिस तरह ब्रिटिश या भारतीय सैनिकों अथवा उनके दलालोंने स्त्रियोंका शील अपहरण किया उस तरहकी पुनरावृत्ति न होने देनेके लिए बहनों और भाइयोंको आज़ादीकी रण-भूमिमें योद्धायोंका साथ देना चाहिये।

*　　　*　　　*

वीरांगना अरुणाके इन सब भाषणोंको पढ़नेके बाद हमें यह बात अनुभव हुए बिना नही रहती कि, उनका राजनैतिक जीवन सिर्फ महात्मा गाँधीके सहवासका फल नहीं है। पहले जिन महिलाओंने हमारे देशके अहिंसक आन्दोलनोंमें भाग लिया था उनमेंसे श्रीमती सरोजनी नायडू, श्रीमती विजय लक्ष्मी पंडित, श्री. कमला देवी चट्टोपाध्याय, उनकी पञ्जाबी सहकारिणी स्व. सत्यवती देवी आदि अनेक महिलाओंके तरह तरहके प्रेरणाओंके रंगोंसे इनका राज-नैतिक जीवन रंगा हुआ है। एक शांत कॉन्वॅटके एकान्तमें बैठकर जीसस और मेरीकी कथाएँ सुनकर साध्वी बन जानेके लिए आतुर हो जानेवाली अरुणाको ऐसी किस शक्तिने बदलकर राष्ट्र दीक्षामें दीक्षित किया, यह प्रश्न हमें आश्चर्यमें डाल देता है! साथ ही साथ ऐसा भी मालूम होता है कि मानों स्त्री और [illegible] और राजनैतिक जीवनके आदर्शसे सब भेद-भावोंको मिटानेके लिए यह काफी है।

स्त्री भी पुरुषके ही सामान और उतनेही परिमाणमें राष्ट्र अथवा समाजकी निर्मातृ है इसलिए प्रत्येक स्त्रीका यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वह अपने जीवन का एक अंश समाज और राष्ट्रको भी दे। इसका मतलब यह नहीं है कि स्त्री अपनी जिम्मेदारियोंको एक ओर रखकर और विवाहित जीवनके उद्देश्योंको भूल कर यह कार्य करे; ऐसा तो कहना भी समाजके लिए भ्रामक है आने वाले समय को न पहिचान कर वर्तमान समयको नष्ट करना बेकार है। राजनैतिक जीवन बितानेवाली हमारे यहाँकी सब महिलायें जैसे श्रीमती सरोजिनी नायडू विजय लक्ष्मी, कमला देवी आदिके जीवनमें हमें कहींभी घरैलू जवाबदारियों या विवाहित जीवनमें किसी तरहकी कमी दिखाई नहीं देती। इतनाही नहीं पूज्य माता कस्तूरबाके सामाजिक और राजनैतिक जीवनमें वह आदर्श अखण्डित रूपसे निभाया गया था, इस में सन्देह नहीं। हमें उसमें पुरुष और प्रकृतिके स्वाभाविक और सुन्दर जीवनकी प्रतिध्वनि सुनाई दी है। जहाँ कहीं भी अपवाद हुए हैं वे पुरुष अथवा प्रकृतिकी अपेक्षा भाग्यके द्वारा ही अधिक बाधित हुए हैं।

गये दो विश्वयुद्धोंमें प्रकृति-प्रदत्त, शारीरिक कोमलताके होते हुए भी स्त्रियोंने जो महत्वपूर्ण कार्य किये हैं, वे स्त्रियोंकी राजनैतिक और सामाजिक जीवनकी महत्वपूर्ण जागृतिके प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। इधर पुरुष जब देश और दुनियाके सँकेर रास्तेसे गुजर रहा था तो उधर आन्तरिक व्यवस्थाओं व्यवहारके कार्य बहुधा नारियोंने किये और साथ ही कुशलतापूर्वक भी। इन दो विश्वयुद्धोंने स्त्रियोंके सामाजिक और राजनैतिक जीवनपर काफ़ी प्रभाव डाला है; आज उनके जीवनके मूलमें क्रान्ति व्याप्त हो गई है। स्त्रियोंने आज जो शक्ति प्राप्त की है, जितना उत्थान किया है, शान्तिके दिनोंमें शायद उसे पाने के लिये पचासों वर्ष लग जाते। युद्ध जन्य परिस्थितियाँ ही वह कारण है जिसने इतनी बड़ी अवधिको इतना छोटा कर दिया। आज उस बढ़ते हुए वेगको रोकनेका प्रयास करना व्यर्थ ही मालूम होता है।

आज हम देखते हैं कि राष्ट्रीय अथवा निजी जीवनमें, सामाजिक या राजनैतिक श्रेणियोंमें भी स्त्री जागृत है। हमें मालूम होता है अब उनमें परा-

धीनता, विषमता या अन्यायको सहन न करके विद्रोह करनेकी भावना धीरे धीरे जागृत होती जा रही है, और यह सच है। और यह भी प्रायः निश्चित ही है कि दिनोंके बीतनेके साथ ही साथ उनकी वह जागृति उतनी ही अधिक वेगवती और व्यापक होगी। इन महायुद्धों और राष्ट्रीय आन्दोलनोंने दुनियाको दिखा दिया है कि जिस तरह स्त्री एक सुगृहिणी और सुमाता बन सकती है उसी तरह राष्ट्रकी एक विशिष्ट शक्ति भी हो सकती है।

आज हमारे समाज द्वारा जो तरह तरहके अपवाद या निषेध नारी जीवनके लिए किये जाते हैं वे बताते हैं कि हममें या हमारे समाजमें परिस्थियोंको पहचानने क्षमता नहीं है। स्त्रीका विवाहित या अविवाहित होना उसकी सामाजिक या राष्ट्रीय सेवाओंका मापदंड नहीं है। परिस्थितिकी जटिल विषमताओंमें स्त्रियोंने अपनी क्षमताका सुंदर परिचय दिया है। यहाँ प्रश्न तो सिर्फ इच्छाका ही है। यदि स्त्री यह अनुभव करे उसके लिए घर और परिवारके बाद देश और समाजके लिए भी कुछ करना बाकी है, और वह कार्य जब कर्त्तव्यमें गिना जाए तब उसे रोका नहीं जा सकता।

तब हम देखते हैं कि इतनी जागृतियोंके बाद स्त्रियोंके सम्मुख एक व्यापक और विस्तृत राष्ट्र है जिसके लिए उन्हें बहुत कुछ करना है। राष्ट्रीय समस्याओंमें स्त्रियोंको रस लेना चाहिए और समाज अथवा शासनपर भरोसा करके समय गँवानेकी अपेक्षा स्वयं उनमें क्रियात्मक भाग लेना चाहिए। यदि उनके इन कार्योंमें पुरुष विरोध करें तो ऐसी जगह उनका विरोध करना स्त्रियोंका कर्त्तव्य हो जाता है। यदि विवाहित जीवन ऐसे कार्योंमें बाधा देता है तो वह जीवन पुरुषोंके लिए भी उतना ही बाधक होना चाहिए। अच्छा तो यही होगा कि यदि स्वतंत्रतापूर्वक इन समस्याओंपर विचार किया जाए तो ऐसी अनेक ग़लत फहमियाँ दूर होंगी। स्त्री और पुरुष दोनोंके लिए राष्ट्रसेवा समान मूल्य रखती है, राष्ट्रसेवामें दोनोंको वह परितृप्ति मिलती है जो कर्त्तव्य-पालनके बाद होती है। यदि अन्य प्राणियोंकी अपेक्षा मनुष्यने अधिक बुद्धि पाई है तो उसका दुरुपयोग करना मूर्खता पूर्ण ही है। विलास भी मानव-जीवनकी एक विशिष्ट वस्तु है पर उसे कर्त्तव्यके लिए सब कुछ मान लेना विनाशका कारण होता है।

सबसे बड़ी बात इस विषयमें जानने योग्य यह है कि राष्ट्रसेवी दम्पतिमें सहनशीलताके साथ एक दूसरेको सम्पूर्ण रूपसे समझनेकी क्षमता होनी चाहिए। श्रीमती अरुणाके लिए इस सिद्धान्तको व्यक्तिगत दायरेमें ले जाने पर जहाँ तक हम जान सकते हैं, हमें यह असम्भव नहीं मालूम होता कि अरुणा और आसफअलीमें उपर्युक्त सम्मिलन होगा ही। हमें तो उनके जीवन-प्रसंगोंसे यह मालूम होता है कि प्रथम परिचयमें ही उनके उद्देश्य और भावनाओंके तंतु एक दूसरेसे बढ़कर मिल गये होंगे, क्योंकि इस दम्पत्तिका जीवन एक ही उद्देश्यकी सिद्धिके लिए कृतसंकल्प है, और प्रत्येक साँसमें उनकी वे भावनाएँ एक दूसरेका साथ देती हैं; वह भावना है—भारतकी स्वतंत्रता की। एक ओर श्री आसफअली केन्द्रीय असेम्बलीमें, काँग्रेसके नेतृत्वमें उसकी आवाज बुलन्द करते हैं तो दूसरी ओर श्रीमती अरुणा विराट सभाओंके मंच पर उसकी घोषणा करती हैं। भले ही उनकी विचार धाराएँ समाजवादके अनुकूल हो किन्तु उनका मन गाँधीजीके सिद्धान्तों और रचनात्मक कार्योंके लिए अधिक आस्था रखता है। इसीलिए कुछ दिन पहले जब वे वर्धामें गाँधीजीसे मिलीं थीं गद्गद् हो गई थीं।

× × ×

श्रीमती अरुणाके लिए इंडोनेशियनोंका प्रश्न जितना महत्वपूर्ण है उतना ही महत्वपूर्ण गुमास्तों, विद्यार्थियों, मिल मजदूरों और स्त्री कार्यकर्त्ताओंका का है। इसीलिए उन्होंने बम्बईमें इंडोनेशियन रिपब्लिकके दिन चौपाटीपर बंबईके हजारों स्त्री-पुरुषोंके समक्ष बुलन्द आवाजमें कहा था कि—'बम्बईके नागरिकोंकी यह सभा, इंडोनेशियाकी आजाद जनताका अभिनन्दन करती है; और उस संघर्षमें अपना सहयोग देती है जो वे साम्राज्यवादियोंके साथ अपने लिए ही नहीं बल्कि समस्त एशियावासियोंके लिए कर रहे हैं। यह सभा इंडोनेशियाके लिए काममें लाई जानेवाली भारतीय फौजोंका घोर विरोध करती है, और विदेशी सरकारको चेतावनी देती है कि अब हमारे इण्डोनेशियन भाई-बहनोंके विरुद्ध भारतीय फौजोंका उपयोग भारतवासी सहन न करेंगे। यह सभा प्रस्ताव करती है कि इण्डोनेशियामेंसे, जिसने भारतकी जनताकी

सम्मतिसे अपनेको स्वतन्त्र घोषित किया है, और अपना राष्ट्र-संघ स्थापित किया है, जल्द ही भारतीय और विदेशी सेनाओंको हटा लिया जाय।..अब एशिया वासियोंने अपनी स्वतन्त्रताके लिए अन्तिम निर्णय कर लिया है। हम अब अँग्रेज़ोंसे भीख नहीं माँग सकते। आज इण्डोनेशिया आज़ाद है और साम्राज्यवादी अब इस बातको अच्छी तरह समझ लें कि ईरान, अफ्रीका या एशिया कहीं भी उनका राज्य अब अधिक दिनों तक नहीं टिक सकता।

मित्रराष्ट्रोंने लोकतन्त्र और बन्धुत्त्वकी बातें करके हमारे भारतीय भाइयोंको ज्यादासे ज्यादा संख्यामें सेनामें भरती किया था। अमेरिकाने कहा था कि अब काले गोरेमें भेदभाव न रहेगा। पर अब एटम बमके जोरसे विजय पानेके बाद वे लोक तन्त्र और बन्धुत्त्वकी बातें भुला दी गई हैं। जब जापानी लोग जावा इन्डोनेशिया और बर्मामें सामना करनेके लिए आये थे, तब ये बहादुर राष्ट्र पूंछ खड़ीकर भाग खड़े हुए थे। डच अंगरेज और फ्रेंच अपने साम्राज्योंको छोड़ यूरपमें दौड़ गये थे। पर पुनः जीत जानेपर जिनके बलपर युद्धमें जीते थे जिन देशोंको छोड़कर भाग खड़े हुए थे उन्हीं पर फिरसे हुकूमत जारी कर दी और ब्रिटेनने अपने डच और फ्रेंच साथियोंको इसमें सहायता दी।

अब इन्डोनेशिया निवासियोंने तो डॉ० सोकार्नोंके नेतृत्त्वमें अपना प्रजातंत्र स्थापित कर दिया है। हम चाहते हैं कि भारतमें भी ऐसे सोकार्नो उत्पन्न हों जिससे अंग्रेजोंको यहाँसे ऐसे भागना पड़े कि फिर कभी उनका पैर भी भारतकी भूमि पर न पड़े। ब्रिटिश, रशिया और अमेरिकाने युद्धके बाद अपने उन सब वायदोंको जो युद्धके दरमियान दिए गये थे, अपने आप तोड़ा है। उनके सब चार्टर और परिषदें उनके अपने स्वार्थमें परिवर्तित हो चुके हैं पर अब एशिया वासी उनके धोखे और षडयन्त्रोंसे सचेत हो चुके हैं। सम्राज्यवादी शक्तियां अब एशियाई देशोंपर शासन नहीं कर सकती।

श्रीमती अरुणाके बम्बईके सब भाषण चिरस्मरणीय हैं। बम्बईकी महिलाओंको उन्होंने जो प्रभावशाली सन्देश दिया था वह अब भी उनके लिए उतना ही ताजा और चिरस्थाई है। उस सन्देशमें जो जागृति और वेग है वह अपूर्व है। बम्बईके गुजराती स्त्री-मण्डलके हॉलमें स्त्रियोंकी एक

महती सभामें उन्होंने बहनोंसे कहा था कि—'आप लोग अपने दिमागमें यह भ्रम न रखें कि हम अबला हैं। आपको आष्टी और चिमूर-काण्डोंका बदला लेना है। हमें श्री० म.ग.ग.च.ोग.ी 'झांसीकी रानी'की पल्टनकी तरह भारत में भी एक स्त्री-पल्टन स्थापित करनी चाहिए। आपमेंसे प्रत्येक स्त्री इस पल्टन की सैनिक होगी। हमारी उस झांसीकी रानी पल्टनके सैनिकोंका हथियार तलवार न हो कर चरखा होगा। चरखेकी गूँज गाँव गाँवको ले जाकर हम आज़ादीके सन्देशको जनतामें फैलाएँगी।

इसी प्रसंगमें श्रीमती अरुणाने महिला-परिषदके साथ अपने सम्बन्धोंकी व्याख्या करते हुए कहा कि 'मुझे आश्चर्य होता है कि इस सभामें महिला-परिषदने भाग क्यों न लिया ?'—स्त्री जागृतिके बारेमें उन्होंने साथ ही साथ कहा कि 'गाँधीजीने १६३५ के नमक सत्याग्रहके बाद स्त्रियोंमें अजीब जागृति फैलाई है। १६३५ से १६४२ तक स्त्रियोंने राजनैतिक जीवनमें महत्वपूर्ण हिस्सा लिया है। इस अर्सेमें भारतकी नारी शक्तिने प्रतिकारकी अमर-भावना को सुन्दर प्रश्रय दिया है। उन बहनोंने अज्ञातवासी कार्यकर्त्ताओं को आश्रय दिया था। और सताराके ग्रामों की बहनोंने तो वीरताका एक नया इतिहास ही रचा है।

४२ के आन्दोलनमें हमारी बहनोंने लाठी और गोलियोंका भी बहादुरी से मुकाबला किया था। हम फिर एक बार संघर्षकी तैयारी कर रहे हैं; बहनें इस बार भी पीछे न रह जायँ इसका ध्यान रहे। ४२ की क्रांतिके समय आष्टी और चिमूरकी बहनोंपर ब्रिटिश फौज द्वारा जो अत्याचार किया था, वह भुलाया नहीं जा सकता; हम उस वक्त उन बहनोंकी मदद करनेमें असमर्थ थे।

इन बहनोंने अपने शील भंग और मान भंगके दुष्ट कलंकको जीवन-भर ढोना असंभव समझ, आत्म-हत्या करनेका निश्चय किया था। तब मैंने उन्हें लिखा था कि—'अगर तुम सब अपवित्रकी गिनतीमें गिनी जाती हो भारतकी प्रत्येक स्त्री अपवित्र है! तुम तो देवी हो, तुम्हें आत्म-हत्या करना शोभा नहीं देता।...लेकिन इन बहनोंपर किये गये अत्याचारोंका बदला लेनेके लिए भारतकी सम्पूर्ण नारी शक्ति तैयार रहे, क्योंकि अब हमें सही मानोंमें क्रांति की तैयारी करनी है। तुम्हें अपने सामने यूरोपकी महिलाओंका उदाहरण

रखना चाहिए कि वे किस तरह रणभूमिमें रणचंडीकी तरह लड़ी थीं। 'झांसी की रानी' इसतेने भी वैसा ही पराक्रम दिखाया था; तुम भी उन्हींकी वंशज हो।

तुम्हें यह भी न समझना चाहिए कि यूरोपकी स्त्रियोंको बहुत स्वतंत्रता प्राप्त है; भले ही वे सामाजिक दृष्टिसे हमसे अधिक स्वतंत्र हों, किंतु राजनैतिक स्वतंत्रता तो यूरोप क्या, अमेरिकाकी महिलाओंको अभीभी तक न मिल सकी है। यह समय काँग्रेसी महिलाओंके लिए खरी कसौटीका समय है; उन्हें समस्त प्राप्य साधनोंको लेकर काँग्रेसको मजबूत बनाना है, और काँग्रेसके नेतृत्वमें ही नये युद्धका श्रीगणेश करना है।

अन्तमें अरुणाने भारतकी स्वतंत्रता या परतंत्रताका आखिरी फैसला कर देनेके लिए नये संघर्षका क्रांतिकारी संदेश सुनाया और इसके साथ ही, इस संघर्षके लिए स्त्रियोंका एक मजबूत संगठन बनानेकी घोषणा की उस घोषणाके मूलमें स्त्रियोंके लिए खास संदेश यह था कि—उस संगठनमें सम्मिलित होकर बहनें तलवारकी जगह चर्खेको अपनाएँ और गाँव गाँवमें आजादीका संदेश सुनाएँ।

बम्बईमें श्रीमती अरुणाका भव्य स्वागत किया गया था, उनके बम्बई निवासके अवसरमें उन्होंने जगह जगह अनेक भाषण दिये; उनके बहुतसे भाषण इस पुस्तकमें संग्रहीत किये गये हैं, और कुछ, जो बहुत ही थोड़े हैं; हमें मिल न सकनेके कारण यहाँ प्रस्तुत नहीं कर सके। प्रत्येक सभामें मानवमेदिनी उनके दर्शनोंके लिए उमड़ी पड़ती थी; जगह जगह उन्हें पुष्प मालाओंसे लाद दिया जाता था। सचमुच ही वे इस नूतनयुगकी नारीशक्तिकी मूर्तिमान प्रतीक हैं।

बंबई स्थित दादरके शिवाजीपार्कमें गुमास्ता मंडल और बंबई प्रांतीय विद्यार्थी काँग्रेस द्वारा आयोजित सभामें अरुणाने अपनी पूर्ववत् रखघोषके स्वरमें कहा—'वार्तालाप और समझौतेके जरिये आजादी नहीं पाई जाती। हम १९४२ के संघर्ष और 'भारत छोड़ो' के लिए किये जानेवाले अंग्रेजोंके प्रारम्भिक मुकाबलों और अत्याचारोंको नहीं भूल सकते। वार्तालाप, पत्र-व्यवहार अथवा असेम्बलियोंमें प्रविष्ट होनेसे आजादी नहीं आएगी। हमें सत्य

और दृढ़ताका आधार लेकर आगामी आन्दोलनकी सच्ची तैयारी करनी है। यह जमाना उपदेश या भाषण देनेका नहीं है। काम करो और साथ ही साथ आगेकी तैयारी भी।

आप सब लोग पुष्पहारोंसे मेरा स्वागत कर रहे हैं; सचमुच मेरा न होकर १९४२ के उन वीरोंका स्वागत है जिन्होंने देशके लिए अपना सब कुछ समर्पित कर दिया। इसी शिवाजीपार्कमें १९४२ की नवीं अगस्टकी संध्या को स्व० कस्तूरबा इस कार्यको शुरू करनेवाली थी। किंतु उनकी गिरफ्तारीके बाद भी दादरकी जनताने ब्रिटिश हुकूमतका बहादुरीसे मुकाबला किया था; यह बात भूली नहीं जा सकती। पुष्पहारोंका यह ढेर मुझ जैसी अकिंचन अरुणाके लिए नहीं बल्कि स्व० कस्तूरबा और ४२ के शहीदोंके लिए है। मैं तों उनकी मात्र एक प्रतीक हूँ।

भले ही ४२ का हमारा आन्दोलन सफल न हुआ हो, किंतु जब ब्रिटेन ने भारतीय जनताका जीवन रौंद डालनेका निश्चय किया तब भारतके क्रांति-कारी कार्यकर्ताओंने कॉंग्रेसके अदने सिपाहियोंकी तरह अज्ञातवासी बनकर ब्रिटिश सत्ताके मुकाबलेमें सिर उठाया; और सिरको उसी तरह ऊँचा रखनेके लिए निर्णय कर लिया। ४२ के क्रांतिकारी आन्दोलनकी कसौटीने कितने ही बहादुर, अडिग क्रांतिकारी नवयुवकोंको खरे सोनेकी तरह भारतकी स्वतं-त्रताके लिए प्रस्तुत किया है; आज उनके नामका जय नाद होना चाहिए। उन्हींमें से अनेक नवयुवक आज भी जेलके सीखचोंके भीतर पड़े हैं।

भारतको किसी भी देशकी मददकी आशा नही करनी चाहिए। ब्रिटेन की समाजवादी सरकार अथवा अमेरिका या चीन हमारी मदद नहीं कर सकते, हमे अपने पैरोंपर खड़े होकर मुकाबला करना चाहिए।

बंगाल, आसाम, संयुक्तप्रांत, आंध्र, महाराष्ट्र और दूसरे प्रमुख प्रांतोंकी तरह बम्बईने भी ४२ के आन्दोलनमें प्रमुख हिस्सा लिया था। १४ जनवरी ४६ की चौपाटीकी सभामें अरुणाने इस प्रांतको भी अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की; सभापति श्री नगीनदास टी. मास्टर थे। उन्होंने बंबईके उस विराट जन-समूहका उपयुक्त स्वागत करते हुए कहा कि—'आज म यही सोच रही हूँ कि

आपको क्या कहूँ, और क्या न कहूँ। मैं सवा तीन वर्ष तक चुप रही हूँ। ४२ के बादका जमाना भाषण करनेका नहीं था; उस वक्त ब्रिटिश हुकूमतका मुकाबला करना सचमुच कठिन हो पड़ा था उस वक्त कॉंग्रेसने ब्रिटिश हुकूमत के लिए 'भारत छोड़ो' प्रस्ताव पास किया था। बंबईकी इस महानगरीमें बहुतसे नेता आते हैं और भाषण करते हैं, मै तो जो कुछ कहूँगी एक अदने सिपाहीकी तरह कहूँगी।

इन गये दस दिनोंमेंसे मैं चारो तरफ 'जय हिन्द' की पुकार सुन रही हूँ। सबकी आँखोंमें मैं विजयका तेज देख रही हूँ। तब मेरी आँखोंमें आँसू आ जाते हैं, जब मैं पूछती हूँ कि विजयके चिन्ह हैं कहाँ?...मुझे इसका जवाब नहीं मिलता।

फिर भी आप लोग एक विशिष्ट प्रसन्नता और विजयकी रोशनीसे मेरा स्वागत कर रहे हैं; यह मेरा स्वागत नहीं है; मैं हर बार कहती हूँ कि आप सन् ४२ के उन शहीदोंका स्वागत कर रहे हैं जिन्होंने देशके लिए अपना बलिदान किया है।

भारतकी जनताने अंग्रेजी हुकूमतको यह बता दिया है कि हमारी जीभ पर ताले लगा दो, भले ही हमें सीखचोंमें बन्द कर दो पर अब वे जागृत भारतकी बढ़ती हुई क्रांतिको नहीं रोक सकते, एक की जगह हज़ारों क्रांतिकारियोंकी टोली मैदानमें आएँगी।

बम्बई, राष्ट्रीय क्रांतिकारियोंका प्रमुख दुर्ग है; कई तरहकी धमकियों, जुल्मों, अनाचारोंके डरके बावजूद भी बम्बई नगरीने क्रांतिकारियोंको आश्रय दिया है, इसलिए मैं उनकी ओरसे बंबईके नागरिकोंको धन्यबाद देती हूँ। ये क्रांतिकारीगण बंबईमें इकट्ठे होकर स्वेच्छापूर्वक यहाँ घूमते फिरते थे। यहाँके अनेक अपरिचित नागरिकोंने हम लोगोंके साहस और शक्तिको बढ़ाया था। आजकी ये पुष्पमालाएँ मेरे लिए न होकर उन अनजानोंके लिए हैं जिन्होंने आधी आधी रातको सिर्फ शब्द कहने भरसे, निस्संकोच रूपसे हमारे लिए अपने दरवाजे खोल दिये थे। ४२ के अगस्त आन्दोलनके दिनों में आज़ादहिंद रेडियो एक साधारण वस्तु थी, फिर भी वह रेडियो सिर्फ रेडियो न होकर एक मोर्चा था। उस रेडियोके संचालक डॉ. राममनोहर

लोहिया अभी तक जेलमें हैं; उनपर बहुतसे जुल्म किये गये हैं। उनके पिता के गुजर जानेपर भी उन्हें अभी तक जेलमें रखा गया है। बंबईके आजाद हिंद रेडियो स्टेशनपर काम करनेवाली बहादुर बहन उषा मेहता अब तक बीमारीकी हालतमें अकेली जेलमें पड़ी हैं। एकाएक पुलिस धावा करेगी यह बात मालूम हो जानेपर भी, उषा बहन अपने निश्चयसे न डिगी। इसी सिलसिलेमें श्रीमती अरुणाने यह बताया कि गुप्त कार्यकर्त्ता कायर नहीं होते; उन्होंने जनताको भरौचके कार्यकर्त्ता श्री० छोटूभाई पुराणी, स्व० कोतवाल वगैरहकीयाद दिलायी। जब ६ वीं अगस्तको नेताओंकी गिरफ्तारी हुई तब मुझे चारों ओर पिस्तोल, लाठी और टीयर गैससे लैस अंग्रेजी हुकूमत ही दिखाई दी। उस वक्त कॉंग्रेसने 'भारत छोड़ो' की पुकार की थी। गांधीजीने 'करो या मरो' का सूत्र हमें दिया था। ऐसे अवसरपर जिसको जैसा लग वैसा उसने किया। उस वक्त सबोंने भेदभाव भूलकर सिर्फ देशकी आजादीको पा लेनेका ही निर्णय किया था। हमने यह भी सुना था कि यदि इस बार जनता साथ न देगी तो गांधीजी आमरण अनशन करेंगे। गांधीजीको बचाने के लिए हमने 'भारत छोड़ो' के निर्णयको अमलमें लानेकी ठान ली; हम इस बारेमें कॉंग्रेस और गांधीजीको जिम्मेदार नहीं मानते।

इसके बाद उन्होंने बंगालके अकालका उल्लेख करते हुए कहा कि 'कोई भारतीय या बंगाली बंगालके अकालको सरलतासे न भूल सकेगा। अगर फिर भी वैसी ही परिस्थिति उत्पन्न हुई तो हम लड़ते-लड़ते मर जायँगे। भोजन छीनकर भूखसे मरते हुओंमें बाँट देंगे; जीवनमें एक बार तो मौत आयगी ही......,

अन्तमें उन्होंने नेताओं और जनताको बताया कि वह ब्रिटिश सरकारके वचनोंमें विश्वास न करके अपनी आजादीकी लड़ाईको जारी रखे। आजादी, धारा सभाओंसे नहीं बल्कि मजदूर और किसानोंके संगठनसे आएगी'...यह कहकर उन्होंने ब्रिटिश मालकेसंपूर्ण बहिष्कारका जनतासे अनुरोध किया था।

पहले भी, यह उल्लेख कर दिया गया है कि अरुणाकी विचारधारा और नीति समाजवादके ढाँचेमें ढली हुई है। वे पूँजीपतियोंकी निन्दा क्यों करती हैं उसका सबब उन्होंने इस भाषणमें स्पष्ट कर दिया है। इस

भाषणमें जरा भी मानसिक द्वेष न होकर स्पष्ट वक्तव्य ही है, और उस वक्तव्यके पीछे हम उनके निर्दोष हृदयको देख सकते हैं। ४६ की १८ जनवरी शुक्रवार की साँझको बंबईकी जनताके हर्षातिरेक और स्वागतके बीच उन्होंने कहा—

आप लोग जो सम्मान इन पुष्पमालाओंके साथ मुझे अर्पित कर रहे हैं वह मुझ अकिंचनके योग्य नहीं है, किन्तु एक महान पुरुषकी पत्नीके रूपमें जेलमें जाकर देशके लिए अपना बलिदान देनेवालीके लिए है; मेरा सत्कार किसलिए हो? सचमुच तो इस स्वागतके अधिकारी हमारे अज्ञातवासको सफल बनानेवाले लोग हैं, और प्रशंसाके पात्र भी, हम न होकर वे ही हैं।'

अगस्त आन्दोलनकी गुप्त कार्यवाहियोंका वर्णन करते हुए, इसी सिल-सिलेमें श्री० अरुणाने कहा कि 'हमारे पास ऐसे भी कार्यकर्त्ता थे जिन्होंने आस्मानके तारोंके नीचे कई रातें गुजारी थीं। वे ही सैनिक हमारे हाथ-पैर थे। वे क्रांतिकारी विद्यार्थी और नवयुवकगण पुलिस द्वारा गिरफ़तार कर लिए गये, और उसके बाद पुलिसने उनपर अनेक अत्याचार किये यह सब सहन करने पर भी उन्होंने अज्ञातवासी कार्यकर्त्ताओंके नाम और स्थान नहीं बताये। क्रूरतम अत्याचारोंके सहन करनेपर भी वे नवयुवक खामोश रहे, एक शब्द भी उनके मुँहसे न निकला। उन्होंने नौकरशाहीके हाथमें ऐसी एक भी कड़ी न सौंपी जिससे हमारा संगठन टूट सके। उन नवयुवकोंमें प्रसिद्धि या या गुणगानकी चाह न थी। अभी भी उनमेंसे अनेक युवक जेलमें हैं, और इस प्रतीक्षामें हैं कि आजाद भारतकी जनताके द्वारा वे कब मुक्त होंगे।

शायद नेतागण हमसे पूछेंगे कि इस ढंगकी भयंकर ज्वाला तुमने क्यों फैलाई? हमारा उत्तर यही होगा कि बापूजीके उपवासके मनहूस वातावरण ने हमको आशंकित और पीड़ित किया और हमें यही मार्ग लेना पड़ा, हमने बापूको जेलमें डालनेवाली ब्रिटिश हुकूमतके विरुद्ध क्रांति की थी।

श्रीमती अरुणाने भारतीय जनताकी उस आशाकी ओर भी संकेत किया जब वह अमेरिकाकी ओर सहायताकी दृष्टिसे देखती है। उन्होंने कहा—'जब गाँधीजी उपवास कर रहे थे तब जनताके द्वारा अमेरिकन प्रतिनिधि फिलिप्स से मध्यस्थता करनेकी विनंती की गई थी, तब उस ओरसे नक़द जवाब मिल

गया था कि—'यह तो ब्रिटेन और भारतकी बात है, हम इसके बीच में नहीं पड़ सकते।

मुझसे कई बार पूछा जाता है कि तुम १९४२ के पहले तो समाजवादी न थीं, अब कैसे बन गई ? तुम पूंजीपतियोंकी निन्दा क्यों करती हो ?...इन सब बातोंके कारण भी उपर्युक्त हैं। बापूजी के उपवासके वक्त मैंने कई धनवानों को अपने हाथोंसे पत्र लिखे थे कि 'कृपया लिनलिथगोसे मिलिए' 'बापूजीकी जिन्दगी बचाइए'। उन लोगोंका जवाब मिला 'हमारे हाथ बँधे हैं' 'हम लाचार हैं', आपकी मदद नहीं कर सकते'—आज वे ही पूँजीपति ब्रिटेनके उद्योग पतियोंके साथ मिलकर, और करारनामा करके भारतमें ब्रिटिश माल मँगानेकी व्यबस्था कर रहे हैं, ब्रिटिश मालपर भारतकी छाप लगाकर बेच रहे हैं ! उनके प्रति मेरी घृणाका यही कारण है।

आज हमें सिर्फ़ संघर्षकी बात करना है, हम समझौतोंको नहीं मानते न एटली या उनकी मजदूर सरकारको पहचानते हैं। हमारी सबसे ज्यादा पह-चान तो बंबईकी पुलिस है। आज भाषण या ठहराव करनेका ज़माना नहीं जरूरत है काम करने की, लड़ाईके लिए तैयारी करने की।...आज मैं आपके सामने भाषण कर रही हूँ, कौन जानता है कल या उसके बाद बरसों तक मैं आपके सामने आ भी न सकूँ। गाँधीजीने ही हम लोगोंको असहयोगका मंत्र दिया है, और आज़ादीका मार्ग भी यही है, हिंसा या अहिंसा उसके साधन मात्र हैं। असहयोग स्वतंत्रताका एक महत्वपूर्ण उपाय है। गांधीजीके अस-हयोग मंत्र देनेके बाद आज चालीस करोड़की आँखोंमें एक नई ज्योति दिखाई देती है। आज हमारे सम्मुख सिर्फ़ गांधीजीके उस असहयोगको अपने आप में समा लेनेका प्रश्न है।

कांग्रेसके मंत्रिमंडल क्या करेंगे ? क्या असेम्बलियोंमें जाकर वे कॉंग्रेसी मंत्रिगण नौकरशाहीको नेस्तनाबूद कर सकेंगे ? गोली चलाकर हजारों निर्दोषों की जान लेनेवाली पुलिस को क्या वे दूर कर सकेंगे ? मैं जानती हूँ कि, ४२ के पहिले भी कांग्रेसी मंत्रिमंडल थे। पर १९४२ के कांग्रेस प्रस्तावके बाद नौकरशाही ने जोर पकड़ा और उसने इन मंत्रियों को ही गिरफ़्तार किया

इसीलिए हमारा कहना है कि धारासभाएँ आजादी लानेमें असमर्थ हैं। हम जानते हैं कि यह कार्य कठिन है; पर, ४२ की जनक्रांति को देखनेके बाद हमारा विश्वास है कि यह महान कार्य भी होकर रहेगा। नदीके पानीको रोक कर बिजली पैदा की जाती है उसी तरह भारतकी जनशक्तिको किसी ऐसे मार्गकी ओर ले जाना चाहिए कि जिससे समय आनेपर वह रचनात्मक कार्योंकी ओर प्रवृत्त हो।

फिर एक बार गुरुवार ताः १८ की शामको, चौपाटीकी रेतीपर अरुणाका आदेश सुननेको उत्सुक विशाल जनसमूहको उन्होंने बताया कि' बृटिश सरकार द्वारा किये जानेवाले वादे झूठे और भ्रमात्मक हैं। फिर एक बार इस सभामें उनकी बृटिश मालके बहिष्कारकी भावनाने उग्ररूप धारण किया; उन्होंने कहा—'यह बहुत बड़ी गलती हम लोग कर रहे हैं, यह सोचकर कि भारत की आजादी जल्द से जल्द आ रही है; मैं फिर कहती हूँ कि असेम्बलियोंके जरिये आजादी नहीं आ सकती और न बृटिश सरकार उसे दे ही सकती है। इस तरह हमें मालूम होना चाहिए कि आजादी की जगह गुलामी आ रही है; बृटिश सरकार लालच देकर भारतको अपने जालमें फांस रही है।...यही मार्ग सर्वोत्तम है। क्रांतिके लिए तैयार हो जाओ, जबसे मैं अज्ञातवास छोड़कर बाहर आई हूँ तब ही से जनतासे कह रही हूँ कि नई लड़ाईके लिए कमर कस लो; और उस संघर्षका प्रारम्भ, बृटिश मालके सम्पूर्ण बहिष्कारसे करो।'

उसके बाद उन्होंने अगस्तकी जनक्रांतिके वीरोंकी रहस्यमयी कहानियों का संकेत करके उन्हें प्रशंसा-युक्त श्रद्धांजलि अर्पित की। गद्‌गदकंठ से भाषण जारी रखते हुए वे कहती गईं—'आज मैं आपके सामने खड़ी हूँ। मैं परेशान हूँ, मुझे यह समझमें नहीं आ रहा है कि क्या कहूँ और क्या न कहूँ; मैं अपनी कहानी आप लोगोंसे कहना चाहती हूँ। आज तक कांग्रेसके सैनिकों का काम सभा करना और जुलूस निकालने का था। पर अब '४२ के आन्दोलन के बाद यह मार्ग बदल गया है; मैं एक सैनिककी तरह ही अपनी कहानी कहूँगी। साथ ही साथ उनकी भी जिन्होंने अज्ञातरूपसे १९४२ के अगस्त आन्दोलनमें भाग लिया था। वर्षोंसे बृटिश सल्तनतने कुचल कुचल कर

उन्हें इतना मज़बूत बना दिया है कि उन्होंने आखिरकार उस विदेशी हुकूमत से विद्रोह किया, और किसी भी हालतमें अपना सिर नहीं झुकाया। बंबई ने इन क्रांतिकारियोंको आश्रय दिया था; उन लोगों के लिए बंबई के हज़ारों द्वार खुल गये; बंबई की जनता निडर बन गई थी, और इस निर्भयता के कारण वह धन्यवाद की पात्र है !

समाचार पत्र अगस्त आन्दोलन की बहुत सी बातें लाचार होकर प्रकाशित न कर सके थे। जिन्होंने बम्बई में आज़ाद रेडियो का संचालन किया वे राममनोहर लोहिया भी आज हमारे बीच नहीं हैं, उनपर लाहौर के किले में सरकार द्वारा असह्य अत्याचार किये गये हैं।

इस महान कार्यके लिए हम साहसी बालिका उषा मेहताको भी नहीं भूल सकते; आज वे यरवदा जेलमें अपने दिन गुज़ार रही हैं (बंबईके कॉंग्रेस मंत्रिमंडलकी स्थापनाके साथ ही वे ता. ३ अप्रैल १९४६ को छोड़ दी गई हैं) गुज़रातके वृद्ध श्री. छोटुभाई पुराणीने भी उस वक्त वह जोश दिखाया था जो युवकोंको भी मात कर दे। जनतासे मेरी यही विनती है कि जब वह नेताओं के ज़यनाद करे तब इन लोगोंको न भूले। और हो सके तो 'उषा मेहता की जय' और 'लोहियाकी जय' भी कहें। इस तरह उन्होंने जो जो कठिनाइयाँ झेली हैं उसे आप याद तो कर सकेंगे।

आप शायद यह पूछेंगे कि हम लोगोंने किसकी स्वीकृतिसे जेलोंके बाहर रहकर सेवाका निर्णय किया था ?...हमारे नेताओंको जेलोंमें ठूँसा गया; हमारे चारों ओर, हमारे देश-बंधुओंपर अंग्रेजोंके द्वारा लाठी, अश्रुगैस और गोलियोंका प्रयोग किया गया। तब हमने यह दृढ़ निश्चय किया कि 'चालीस करोड़ हरगिज़ नहीं दबेंगे !' आप फिर कहेंगे कि आखिर किसकी मंजूरीसे आपने यह निर्णय किया !...तब हम कहेंगे कि हमारा यह निर्णय आठवीं अगस्तके प्रस्तावकी स्वीकृतिके अनुरूप था। उस प्रस्तावका आदेश था— प्रत्येक मनुष्यस्वतंत्र होकर रहे; समय आनेपर उसे जो सूझे वह करे।'

उस वक्त गांधीजीका यही आदेश था कि 'करेंगे या मरेंगे।'

हमारे सामने ये ही दो आदर्श मार्ग-प्रदर्शक थे, जिनकी स्वीकृतिसे, हमें जो कुछ ठीक लगा, किया। हमने हमारी किश्ती क्रांतिकी आँधीमें बेधड़क

होकर छोड़ दी; हमारी वह सफ़र किसी भी पक्षविशेषके लिए न थी: वह सफ़र थी सिर्फ भारतकी स्वतंत्रताके लिए। तूफ़ानमें हमारी किश्ती डोल रही थी, यह किसीको मालूम न था कि वह पार उतरेगी या टूट जाएगी। अगर फिर भी उसकी जरूरत हुई तो हम कल ही उस सफ़रके लिए तैयार हैं! हमें यही डर था कि यदि जनता शांत होकर बैठी रहेगी तो गांधीजीको दुःख होगा और वे फ़िर उपवास करेंगे। इसलिए हमने प्रबल प्रतिकार करनेका दृढ़ निश्चय कर लिया। हमारा उद्देश्य किसी भी ढंगसे स्वतंत्रताके आन्दोलनको आगे बढ़ाना था।

काँग्रेसके अगस्त प्रस्तावने जनतामें जागृति उत्पन्न की। जनताने स्वतंत्रताके मदसे उन्मत्त होकर जो कुछ किया; अगर समय बदल जानेपर वह अपने उस कार्यके लिए पछताए तो यह उसके लिए शोभास्पद नहीं: यह कायरता है! हाँ, काँग्रेस यह कह सकती है कि जो कुछ हुआ वह अहिंसाके विरुद्ध था; यह हम मानते हैं: और इसके उत्तरमें हम यही कहेंगे कि यह हमारा दोष था।

तब वीरांगनाने बंगालके भीषण अकालकी याद दिलाते हुए जनताको बताया कि आज फिरसे अकाल भारतकी ओर मुँह बाये खड़ा है: आपको उससे खबरदार रहना चाहिए। अब हम ३५ लाखकी मौतके बाद एक करोड़ मानवोंकी आहुति नहीं दे सकते! इस बार हम ब्रिटिश हुकूमतको दिखा देंगे कि अब करोड़ मनुष्य भूखसे घुल-घुलकर यों ही नहीं मर जाएगे बल्कि लड़ लड़कर मरेंगे; अन्न छीनकर खाएँगे पर कुत्तेकी मौत नहीं, वीरोंकी मौत मरेंगे। नहीं तो आनेवाली जनता यही कहेगी कि ३५ लाखकी मौतके बाद भी हिन्दुस्तानकी आँखें न खुली। हमें इस मंजिलको कैसे पार करना होगा, यह विचार अभीसे कर लेना चाहिए।

ब्रिटिश हुकूमतके फ़ौलादी पंजोंको हटाना कोई आसान काम नहीं है; हमारी बहुतसी कमजोरियां अभी तक हमारी मंजिलकी रुकावटें बन रही हैं। हमारे बहुतसे नेताओंकी यह मान्यता है कि भारत आज़ाद हो गया है, ब्रिटिश सरकार भारतकी राष्ट्रीय भावनाओंको जानकर उसे जल्द ही आज़ादी दे देगी।

हमारे गाँधीजी, नेहरूजी और सरदार पटेल जैसे लोकप्रिय नेताओंने हमें नींदसे जगाया है. हममें स्वतन्त्रताकी भावनाको जागृत किया है। पर हम नम्रता पूर्वक उनसे यही कहना चाहते हैं कि आज़ादी ऐसे नहीं आएगी। सिफ असेम्बलियोंमें जानेभरसे आज़ादीका आना जरूरी नहीं हो जाता अगर सचमुच ही ब्रिटिश सरकार हमें आज़ादी देना चाहती तो जो गोलीकांड बंबई और कलकत्तामें हुऐ हैं वे न होते; जयप्रकाश और लोहिया अभी तक जेलके सीखचोंमें बन्द न रहते। नेताओं हमारा यही निवेदन है कि यह आज़ादी नहीं है; बल्कि गुलामीके लिएही फँसानेका एक दूसरा जाल फैलाया जा रहा है।

ब्रिटेन और भारतके पूजीपतियोंमें जो नये नये समझौते हुए हैं; वे भारतकी परतंत्रताको और अधिक बढ़ानेके लिए हैं। समझौते या संधिका हाथ बढ़ाने से कभी स्वतन्त्रता नहीं आती। स्वतन्त्रताका मार्ग संगठन और लगातार संघर्ष का है। मजदूर और किसानोंकी क्रांति हीं स्वतंत्रता लानेकी सामर्थ्य रखती है पूंजीपति और उद्योगपति किसीभी हालतमें आज़ादी नहीं ला सकते। इसीलिए हमें एकबार फिर दूसरे संघर्षकी तैयारी करनी होगी।

जहाँ असेम्बली भवनपर यूनियन जैक लहरा रहा है वहाँ हमारे नेताओंकी मोंटरोंपर लहराता हुआ तिरंगा झण्डा पहुँचेगा। उस वक्तभी अगर गोरे लोग भारतमें रहेंगे तो यह हम सहन न कर सकेंगे। पर यदि उस वक्तभी लोहिया जेलमें होंगे तो हम कांग्रेस मंत्रिमंडलके पास पहुँचकर जेलकी कुंजी मांगेंगे।

हम सबोंको वज्रकी तरह दृढ़ और कठोर होना होगा क्योंकि हमें फिर एक वार संघर्षके लिए तैयार होना है। जन क्रांतिके सच्चे सिपाही होनेके पहिले हमें त्याग और संयमको सच्चे अर्थोंमें अपनाना होगा!

गाँव गाँव जाकर पंचायती राजका डंका बजाना होगा, और कम्युनिस्ट भाइयोंको समझाना होगा कि ब्रिटिश लोकतन्त्रका छद्मविचार वे अब छोड़ दें।'

आगामी आन्दोलनके कार्यक्रमके वर्णनमें अरुणाने सबसे पहले ब्रिटिशमाल केबहिष्कारका कार्य बतलाया और यहभी कहा कि अब ब्रिटेनने लड़ाईका माल बनाना छोड़ दिया है, अब वह पाँच वर्षके युद्ध व्ययका नुक़सान पूरा करनेके

लिए भारतमें बिक्रीके लिए सामान बना रहा है। आपका पहिला काम उस माल का सम्पूर्ण बहिष्कार करनेका है, जिससे कि देश आने वाली आर्थिक दासता से बच सके।

उसके बाद हम हमारी जरूरतोंको किसी तरहभी पूरी कर लेंगे—गाँव गाँवमें चरखेके केन्द्र होंगे और यह सब कांग्रेसके नेतृत्व में ही होगा क्योंकि जनताकी सच्ची संस्था कांग्रेस ही है; चालीस करोड़ उसके सदस्य हैं इसलिए हमें उसे और अधिक शक्तिशाली बनाकर ब्रिटिश हुकूमतका खात्मा कर देना है।

बम्बईके ही एक उपनगर विले पारलेकी काँग्रेस कमेटी द्वारा आयोजित एक सभामें सभापति पदसे श्री वी. वी. रानडेने श्री मती अरुणाका परिचय देते हुए कहा कि—'हम आज भारतके नवजागरणकी एक प्रतीकके रूपमें श्रीमती अरुणाका स्वागत कर रहे हैं, सन् १६४२के अगस्त आन्दोलनके पहले जनता इन्हें अथवा इनके सहकारियोंको पहिचानती भी नहीं थी, किन्तु जब अगस्त क्रांतिके समय इन वीर पुरुषों और महिलाओंके नेतृत्वमें देशने अमानुषिक जुल्मों और अत्याचारोंके विरुद्ध मोर्चा लिया तबही जनता इन्हें पहचानने लगी। क्रांतिने इन सबोंको हमारे सामने ला दिया, मैं कहूँगा कि अरुणाके ही द्वारा उस आन्दोलनमें अनोखा जोश उमड़ सका था।

तब सभापतिके इस भाषणके जवाबमें श्रीमती अरुणाने बतलाया था कि सभापतिके भाषणसे मैं सहमत हूँ क्योंकि मेरा परिचय आप लोगोंको ठीक तरहसे दिया गया है। १६४२ के पहिले मुझे बहुत कम लोग जानते थे, अगस्त क्रांतिने ही हम लोगोंको अपनी क्षमता और शक्तिका परिचय कराया था। देशकी सर्व साधारण जनताके लिए भी यही कहा जा सकता है; पहले वह जानती न थी कि उसमें कितनी प्रबल शक्ति छुपी हुई है; वह शक्ति ब्रिटिश शासनका विरोध और उन्मूलन करनेको उपयुक्त थी। तब जनताके पास किसी शस्त्र या बारूद गोलेका इन्त-जाम न था, जबकि सरकार इन सब साधनोंसे लैस थी। जनताको जब अपनी ताकतका खयाल हुआ, तब हमने भी जाना कि हम अपनी शक्ति-पूर्वक

जनताका साथ दे सकते हैं। पर हम जेलमें बन्द रहना नहीं चाहते थे। जब हमारे अन्य सहयोगियोंको जेलोंमें भर दिया गया, तब हम शेष बाहर रहनेवालोंने अज्ञातवासमें रहकर आन्दोलन जारी रखनेका निर्णय किया। हमने जेलमें जाना नापसन्द क्यों किया इसका भी एक सबब है; हमें उस समय इस बातका आभास मिला था कि अगर इस आन्दोलनको तीन सप्ताहमें पर्याप्त सफलता न मिले तो गाँधीजी अनशन करेंगे, इसलिए हमने क्रान्तिको सम्पूर्ण वेगवती बनानेके लिए अपना सब कुछ लगा दिया; उस समय यही एक मार्ग था कि हम अज्ञात रहकर क्रान्तिकी पूर्ति करें।

ब्रिटिश सरकार और उसके एजेण्टोंकी यह मान्यता थी कि यह जो चारों ओर एकायक ज्वाला भड़क उठी है उसकी योजना बहुत पहिलेसे की गई होगी। ऐसे विचारोंके लिये मुझे उनपर दया आती है, क्योंकि हमारे पास उसके पहिले कार्यक्रमके नामपर कुछ भी न था, और न हमारे नेताओंके के पास ही। यकायक चारों ओरके इस विस्फोटसे सरकार भय-त्रस्त और अचरज में विमूढ़ हो गई। उसने भूतपूर्व वायसराय लॉर्ड लिनलिथगोको एक एक संदेशमें बताया भी था कि 'देशके नेताओंको जेलोंमें ठूँस देनेके बाद भी जनता ब्रिटिश सशस्त्र-शक्तिका ज़ोरदार मुक़ाबिला करेगी यह किसीने सोचा भी न था!' जनताने मृत्युका डर छोड़कर सरकारके पशु-बलका अहिंसासे सामना किया; बहुतसे व्यक्तियोंने देशके लिये अपनी देहका बलिदान दिया। भले ही उन शहीदोंके नाम स्वर्णाक्षरोंमें न लिखे जायँ पर उनके नाम हमारे स्वतन्त्रता-आन्दोलनके इतिहासमें खूनके अक्षरोंसे जरूर लिखे जाएँगे।

सरकारको इस बातका भान भी न था कि स्वतन्त्रता आन्दोलनके पूज्य पिता गांधीजीका जनशक्तिपर क्या प्रभाव पड़ सकता है; बहुत देरके बाद वह इस असलियतको जान सकी। सर स्टेफर्ड क्रिप्सके निराश होकर बिदा होनेके साथ ही क्रांतिका आरम्भ हुआ। इन दो घटनाओंके बीच जो समय बचा था, गांधीजीने उसका पूरा पूरा उपयोग लिया। अर्थात् ज्योंही गांधीजीको हमारे बीचसे हटाकर जेलमें बन्द किया गया त्योंही गांधीजीके मुक्तिमन्त्रके जादूने अपना असर दिखाया। उस मन्त्रके शब्द बिलकुल

सीधे सादे होते हुए भी, जनतामें नवजागृति उत्पन्न करनेके लिये काफी थे।

युद्ध समाप्त होते ही अन्तरराष्ट्रीय सम्बन्धोंकी तब्दीलीसे सरकारने लाचार होकर अपनी भारत-नीतिमें थोड़ा-बहुत फेरफार किया है। पर हमें उनकी भ्रमपूर्ण बातोंकी भूलभुलैयामें भूल कर भी न पड़ना चाहिए। आज ब्रिटिश साम्राज्यवादका सिंहासन डगमगा रहा है; उसके स्थिर पैर काँप रहे हैं क्योंकि वे देशके दलदलमें बुरी तरह फँसे हुए हैं। हम सबोंको मिलकर ऐसा प्रयत्न करना चाहिए जिससे कि वे पैर हमारी भूमिमेंसे निकल जाएँ और हमें हमेशाके लिये उसके पंजोंसे छुटकारा मिल जाय।

आज हमारे नेतागण समझौतेके जिस पहलूसे स्वतन्त्रताका प्रयत्न कर रहे हैं; वह स्वतन्त्रतासे दरअसल बहुत दूर है; उसके लिए तो हमें साम्राज्यवादके मूलपर प्रहार करना होगा और वह मूल उसका व्यापार है। हमारा उद्देश्य यही होना चाहिये कि हम वहाँसे आनेवाले मालका सम्पूर्ण बहिष्कार करें और, किसी भी तरहके कच्चे मालको वहाँ भेजनेसे रोकें। ऐसा करनेसे ही पूंजीपतियों द्वारा देशके विरुद्ध जो षड्यन्त्र रचा जा रहा है उसका अन्त हो सकता है।'

प्रान्तोंमे स्थापित होनेवाली लोकप्रिय राष्ट्रीय सरकारके सम्बन्धमें उन्होंने कहा कि 'हमें उसे आज़ादीकी कसौटीपर कसकर देखना है कि उसमें कितनी राष्ट्रीयता है? उसका सच्चा मूल्य हमारी दृष्टिमें तब ही होगा जब उसकी सत्ता हाथमें लेते ही समस्त राजनैतिक क़ैदियोंकी मुक्ति हो जाय। उन्हें उस सत्ताके उपयोगसे आष्ठी और चिमूर काण्डके जल्लादोंको ढूँढ़ ढूँढ़ सज़ा देनी होगी। राष्ट्रीय सरकारकी परख करनेकी और भी बहुतसी कसौटियाँ हैं। हमें देखना है कि हमारी राष्ट्रीय सरकार उस यूनियन जेकको कबतक चलाती है कि जिसने हमारे तिरंगे झण्डे का बार बार अपमान किया है। ऐसे कई प्रकार हैं जिससे हम राष्ट्रीय सरकारकी परीक्षा कर सकें। अगर इन बातोंमें वह असफल रही तो हमें उसका मुक़ाबला करना होगा!'

अभी कुछ ही दिनों पहले जब बंबई बन्दरगाहके 'तलवार' वगैरह जहाजोंके भारतीय नाविकोंने, उग्र असंतोषके कारण सरकारके विरुद्ध आन्दो-

लन और खुला विद्रोह किया था, तब श्रीमती अरुणा बम्बईमें ही थीं। वह समय था जब भारतीय नाविकोंका प्रकोप एकाएक विस्फोटकी तरह फूट पड़ा उनके द्वारा, गुरुवार ता. २१ फरवरीसे रविवार २४ फरवरी तक शहर में जो भीषण क्रांति फैल गई थी उसका विस्तृत वर्णन समाचारपत्रोंमें प्रकट हो चुका है। बहुतसे लोगोंकी यह मान्यता है कि इस विद्रोहका अरुणासे सम्बन्ध था। किन्तु दर असलमें इस विद्रोहका सम्बन्ध अरुणासे कहाँ तक था इसका खुलासा उनके द्वारा अखबारोंको दिये गये एक वक्तव्यसे मालूम हो जाता है। वह इस प्रकार था—

"नौसेनाके भारतीय नाविकोंने हड़ताल की, और उनके द्वारा जो उपद्रव किये गये उनसे शहरके नागरिकोंको तकलीफ़का सामना करना पड़ा। इस सम्बन्धमें मैं कहाँ तक दोषी हूँ, यह मुझे स्पष्ट करना चाहिए। मेरा इस विद्रोहमें कहाँ तक हिस्सा है इस बारेमें बहुत-सी अफ़वाहें उड़ी हैं। इसलिए मुझे नाविक-विद्रोहके प्रारंभसे अंत तकका वर्णन व्यक्त करना चाहिए।

बंबईमें मेरे आनेका कारण, मुझे अपने कई सहकारियोंसे मिलनेकी तीव्र उत्कंठा थी। इतना ही नहीं, गये तीन बर्षोमें विरोध करनेके जो जो नये तरीक़े मालूम हुए हैं उसे लक्ष्यमें रखकर काँग्रेसने जो कार्यक्रम बनाये, उसे अपनाना भी मेरा उद्देश्य था। मेरे सम्मानमें बंबईमें जिन-जिन सभाओंकी योजना की गई थी उनमें मैंने अपनी भावनाको जनताके सामने रखा था मैं देखती थी कि उत्साहपूर्वक मेरे भाषण सुननेके लिए बहुतसे सैनिक भी आते हैं।

इस शनिवारको, भारतीय नौसेनाके कुछ प्रतिनिधियोंने मुझे नौकादलसे फैलते हुए उग्र वातावरणसे परिचित कराया। सोमवारको मुझे खबर दी गई कि नाविकोंने हड़ताल कर दी और बहुतोंने अनशन भी शुरू कर दिया है। मुझसे उन्होंने सलाह माँगनी चाही कि उनके कार्यक्रमकी विधि क्या हो?

मैंने उन्हें शांतिपूर्वक रहनेको कहा और एक हड़ताल कमेटी बनाकर उसके सदस्योंको चुननेका आदेश दिया। जब मुझे उनकी माँगोंका खयाल आया तब मैंने देखा कि उन माँगोंमें बहुत-सी माँगे राजनीतिसे सम्बन्ध रखती

हैं। मैंने उन्हें बताया कि वे सब राजनैतिक माँगे हटाकर सिर्फ़ नौकरी सम्बन्धी बातोंको ही अपने अफ़सरोंके सामने पेश करें। मैंने उन्हें यह भी कहा था कि वे अपनी माँगोंको नौकरीके सुधार सम्बन्ध तक ही सीमित रखें और आज़ाद हिन्द फौज़को छोड़ने और उसी तरहकी दूसरी माँगोंको मिलाकर उसे राजनैतिक रूप न दें।'

इसके बाद फिर एकबार उनके प्रतिनिधिगण मुझसे मिले और कहा कि मैं उनकी ओरसे इस मामलेको अपने हाथोंमें लूँ, इतना ही नहीं, उन्होंने मुझे अपनी सभामें भाषण देनेका भी निमंत्रण दिया। जब मुझे लगा कि उन्हें अपनी इन वाजिब माँगोंकी पूर्तिके लिए राष्ट्रीय शक्तिकी ज़रूरत है, तब मैंने उन लोगोंको सरदार पटेलसे सलाह लेनेकी बात कही; क्योंकि बंबईमें इस समय वे ही काँग्रेसके सर्वोच्च प्रामाणिक व्यक्ति कहे जा सकते हैं। साथ ही साथ मैंने उन लोगोंको यह सलाह यह भी दी कि वे फ़िलहाल एक 'मध्यस्थ समिति' बनाएँ जिसके लिए नाविकोंमेंसे ही प्रतिनिधियोंको चुना जाए; ऐसा होनेसे उनका संगठन मज़बूत होगा।

मैंने उन्हें, उनकी सभामें भाषण करनेसे इन्कार कर दिया क्योंकि उनमेंसे कुछ लोग प्रान्तीय मुस्लिम लीगसे सलाह लेना चाहते थे, इसलिए मैंने उन्हें पूर्ण रूपसे कांग्रेसकी मदद देनेसे इन्कार कर दिया। फिर भी मैं बंबई छोड़ कर जानेवाली थी इसलिए मैंने विद्यार्थियों, मज़दूरों और अन्य कार्यकर्ताओंसे उनकी मांगोंके लिए मदद देनेकी सलाह दी थी; साथ ही मैंने कार्यकर्ताओंसे यह भी निवेदन किया था कि यदि नौसैनिकोंको खुराककी तंगी हो तो उसे पूरी करनेका वे भरसक प्रयत्न करें। उसके बाद मैं पूनाके लिये रवाना हो गई।

जब मैं पूनासे वापिस बंबई आई तब मैंने देखा कि नौसैनिकोंने वातावरणको काफी उग्र बना दिया है। नौसैनिकोंके एक अफ़सर गॉडफेके रेडियो-ब्राडकास्टने अखबारोंमें आँधी सी मचा दी थी; उन्होंने नौसैनिकोंको धमकी दी थी कि 'अगर वे शरणमें न आएँगे तो नष्ट कर दिये जाएँगे।' गॉडफ़ेके भाषणने बारूदमें आग लगा दी, और तीन दिन तक शहरमें वह भीषण

विस्फोट होता रहा; किन्तु उस अराजकताके जवाबदार नाविकोंके बजाय मवाली लोग हैं ।

नौसेनाके अधिकांश सैनिक सरदार पटेलकी सलाह–'बिना शर्त आत्मसमर्पण' को माननेमें आनाकानी कर रहे थे । हालत ज्यादासे ज्यादा खतरनाक होती जा रही थी । नौसैनिकोंने अपनी माँगोंके अस्वीकार कर दिये जाने पर शहर पर बम छोड़ने की धमकी दी थी । इसीलिए मैंने परिस्थिति को काबूमें लानेके लिए पंडित नेहरू को तार द्वारा बुलाने की सूचना दी ।'

बम्बईका यह तूफान चार दिनों तक पूरे वेग में रहा, और इसमें सबसे बड़ा हिस्सा मवालियों और गुण्डों का था । परिस्थिति को सम्हालनेके लिए मिलिटरीने जनता पर बेधड़क गोली-कांड किये इन सब बातोंका विवरण अखबारोंमें प्रकाशित हो चुका है । पर हम उनके वक्तव्य से जान सकते हैं कि इस विद्रोह से अरुणाका कहां तक सम्बन्ध है, यद्यपि उन्हें इस तरह के फौजी मामले में मध्यस्थ बनने के लिए गांधी जी के सिवा अन्य नेताओं का उलाहना भी सुनना पड़ा था । उन्होंने अरुणा की इस कार्यवाही को, 'गुप्त आन्दोलन' का नाम भी दिया । क्योंकि अब कांग्रेस 'गैरकानूनी' नहीं रही, तो अरुणा को, ये सब 'गुप्त आन्दोलन' छोड़कर जाहिर में सब कुछ करनेकी सलाह कांग्रेसकी ओर से दी गई थी । ...कुछ भी हो आज भी गांधीजी और पंडित नेहरूके हृदयोंमें इस वीर रमणीके लिए अपूर्व सम्मान है, और उन्होंने समय समय पर १९४२ के आन्दोलन को वीरतापूर्वक निबाहने के लिए इस वीर रमणी को श्रद्धांजलियाँ अर्पित की हैं ।

अगस्त-प्रस्ताव

जिस समय दुनियामें चारों ओर युद्धकी ज्वालाएँ दहक रही थीं, और ब्रिटेनके अच्छे अच्छे पूर्वीय बन्दरगाह जापानियोंके हाथमें जारहे थे, तब भारत कई तरहके भय, शंकाओं और भुखमरीकी मारसे आहत हो रहा था;सब ओर अंधेरा छा रहा था। जापानियोंके आक्रमणका भारतको सबसे ज्यादा डर था। उस समय काँग्रेस दृढ़ निश्चयके साथ उठ खड़ीं हुई।वह सन १९४२ था। और उसी अवधिमें कांग्रेसने अपना अगस्त प्रस्ताव पास किया।

इस प्रस्तावने भारतकी जनतामें एक नया जीवन-मंत्र फूंक दिया, नई जागृति खिल उठी। देशके नवयुवकोने आगे क़दम बढ़ाय। श्री० जयप्रकाश नारायण, अच्युत पटवर्धन, श्रीमती अरुणा, आदि तात्कालिक काँग्रेस जनोंने नेतृत्व अपने हाथमें लिया और इकट्ठे होकर सरकारसे संघर्ष करनेका नया मोर्चा बनाया उनकी आँखोंमें नई चमक थी, अनंत धैर्य और अडिग विश्वास था, क्यों कि उस चमककी आत्मा आज़ादी थी। उन्हें ब्रिटिश सरकारको इस बात की सुध दिलानी थी कि भीषण अत्याचारोंके बादभी जन-शक्ति कभी उनके आगे नहीं झुकेगी और इसीलिए उन्होंने ए. आय. सी. सी. के अगस्त प्रस्ताव को कार्यमें अति शीघ्र परिणित कर दिया था। इस आन्दोलनके लिए जिन्होंने सर्वस्व समर्पित कर दिया था उन क्रांतिवीरोंके अज्ञातवासकी कथाओंमें जनता रस लेती है, और निस्सन्देह यह बात स्वाभाविक भी है कि जिस अगस्त प्रस्तावके मूलसे अनेक आश्चर्य जनक घटनाएँ प्रगट हुई, जन क्रांतिकी उत्पत्ति हुई और अज्ञात वासी कार्यकर्ताओं द्वारा जो आन्दोलन किया गया उसे जानने नेके लिए जनता आतुर हो!

अगर १९४२ में कांग्रेसने अगस्त प्रस्ताव पास न किया होता, गांधीजीने 'करो या मरों' सूत्रकी पुकार न की होती और जनताको व्यक्ति-स्वातन्त्र्य न दिया होता तो आज श्रीमती अरुणा हमारे सामने न होती और न उनकी रोमांच कहानियाँ ही। फ़िलहाल तो सरकारके प्रतिबंध उठा लेनेसे ही हम उनकी

प्रवृत्तियोंको देख और जान सकते हैं। यह बात भी जानने जैसी है कि महात्मा गाँधी, पंडित नेहरू, मौलाना आज़ाद आदि नेताओंने अगस्त प्रस्ताव को कैसे प्रस्तुत किया!

सन १९४२ में ब्रिटिश सरकार जापानसे युद्ध करनेमें लगी थी, जापान आगे बढ़ता जा रहा था, एक बाद दूसरे श्रेष्ठ बन्दरगाह उसके हाथोंमें जा रहे थे। जिस वक्त उसके बम चितगाँग कलकत्ता और विज़गापट्टम आदि जगहों पर पड़े तब भारतकी जनता एकटक ब्रिटिश सरकारकी ओर नज़र लगाये थी कि उसे कौन सा रास्ता अख्तयार करना चाहिए। एक तो भीतरी कशमकशसे देश बँधाही था दूसरे बाहरसे जापानियोंके नये हमलोंने देशको घबरा डाला।

जब १९४१ में सब नेतागण जेलसे छूटे तब उन्हें उनके सामने खास समस्या यही थी कि जापानियों द्वारा देशपर किये जानेवाले नये हमलोंका सामना कैसे करना चाहिए? स्वरक्षाका उपाय भी कैसे किया जा सकता है, जब ब्रिटिश सरकारके शिकंजे कसे हुए हैं? सब ही शस्त्रागार गोले बारूद और आर्थिक नियन्त्रण उसीके हाथमें था, और भारत बिलकुल निहत्था था। पूरे एक सालके सत्याग्रह आन्दोलनके फलस्वरूप ब्रिटिशोंने अपनी नीतिमें ज़रा भी फेरफार न किया था। मौलाना आज़ाद भी अनिश्चितसे थे; उन्होंने एसोसिटेड प्रेसके प्रतिनिधिकी मुलाक़ातमें कहा कि 'ऐसी परिस्थितियोंमें कांग्रेसकी नीति परिवर्तित करना अशक्य है, क्योंकि गये पन्द्रह महीनोंसे ब्रिटिश नीतिमें कुछ परिवर्तन हुआ हो ऐसी एक भी घटना मेरे देखनेमें नहीं आई, इस परिस्थितिमें कांग्रेस अपनी नीतिमें क्या परिवर्तन करे यह मुझे नहीं सूझता।'

दूसरी ओर सत्याग्रह बंद हो गये थे, जनता आतुर होकर यह देखना चाहती थी कि ब्रिटिश सरकार कांग्रेसकी मांगोंके अनुकूल कुछ करे! लेकिन जब सरकारकी ओरसे कुछ भी नई बात न की गई तब जनता साम्राज्यवादके प्रति अधिक विरक्त हो गई। जनताकी उत्तेजित भावनाओंका आभास पं. जवाहरने एक प्रेस कान्फ़रेन्समें ताः १७ दिसम्बर १९४१ के दिन व्यक्त किया:—

आज कांग्रेसके बाहरके व्यक्ति जब भारत और ब्रिटिश सरकारके बीच समझौतेका प्रयत्न कर रहे हैं तब उन्हें जानना चाहिए कि जनता ब्रिटिश

की नीतिके प्रति अत्यधिक क्षुब्ध हो उठी है मैने अपने पचास वर्षके राजनीतिक जीवनमें जनताकी ब्रिटिशोके प्रति इतनी कड़ुआहट कभी नहीं देखी। दूसरी ओर महात्मा गांधीकी भावनाओंको भी ठेस पहुँची थी जिन्होंने कि स्वयं १६४२ के आन्दोलनका मोर्चा खड़ा किया था; और सरकारने कांग्रेसके प्रति जो रुख अख्तियार किया उससे उनकी सत्याग्रह भावना और दृढ़ हुई। उन्होंने ७ जून १६४२ के हरिजन में लिखा कि — मैं चार महीनोंसे कहता आ रहा हूँ कि इस लड़ाईसे किसीभी पक्षका पलवा विजयकी ओर नहीं झुका है, फिर भी ऐसा सोचना कि जब सरकार थक जायगी तब अपने आप समझौतेके लिए हाथ बढ़ायेगी यह बात मुझे निरी कल्पना मालूम होती है।'

काँग्रेसमें उस वक्त दो पक्ष हो गये थे। एक पक्षने युद्ध-मोर्चेके दोनों पक्षोंसे तटस्थता करना निश्चित किया, जिसमें महात्माजीके साथ सरदार पटेल, राजेन्द्र बाबू, आचार्य कृपलानी, डॉ. घोष वगैरह थे। दूसरा पक्ष युद्धके प्रगतिवादी पक्षको सहायता देना चाहता था; इस नॉनबेलिजरंसी पक्ष में मुख्यतः पं० नेहरू, मौलाना आज़ाद, पं० पंत और श्री आसफअली थे।

महात्माजीके तटस्थ पक्षने अपनी बारडोलीकी मन्त्रणाओंमें यह निर्णय किया कि पंडित नेहरूने फासिज्मके विरुद्ध किये जानेवाले युद्धमें सहायता करनेका निश्चय इसलिये किया है कि जिससे ब्रिटिशोंके साथ समझौताका कोई रास्ता निकले। इतना ही नहीं उस पक्षने, प्रगतिवादी युद्ध-पक्षको नैतिक मदद देनेका भी निश्चय किया था। पं० नेहरूके पक्षने सोबियट रूस और चीनकी प्रजाको अभिनन्दन देनेका प्रस्ताव भी पास कर दिया है। इस प्रस्तावसे यह प्रतीत होता है कि, काँग्रेसकी सम्पूर्ण सहानुभूति उनकी ओर जो है अपनी आज़ादीके लिए लड़ रहे हैं और जिन्हें तकलीफोंका सामना करना पड़ रहा है। इस तरह गांधीजीके पक्षने यह ज़ाहिर किया कि राष्ट्रीय भावनाओंके साथ ही स्वतन्त्र भारत ही अपने देशका बचाव कर सकता है। गांधी पक्ष द्वारा किये गये इस बारडोली-प्रस्तावका विरोध किया गया; काँग्रेसके दूसरे पक्षोंने गांधीजी और उनके चार साथियोंके मतका ज़ोरदार मुक़ाबिला किया। उसी वक्त सरदार पटेलने गुजरात-प्रान्तीय

काँग्रेस कमेटीकी एक बैठक बुलाई, जिसमें गांधीने प्रस्तावके विषयमें सफाई दी, जिसका विवरण १८ जनवरी '४२ के हरिजनमें ऐसा दिया गया था—

'बारडोली-प्रस्तावका ऐसा अर्थ किया जाता है कि यदि सरकारकी ओरसे काँग्रेसको ऐसा विश्वास दिलाया जाय कि वह हमें युद्धके बाद सम्पूर्ण स्वतन्त्रता देगी, तो काँग्रेस साम्राज्यवादको जीवित रखना चाहती है। इसका मतलब यह नहीं कि, यह कोई सौदा है; बल्कि सिर्फ ये शर्तें रखी हैं। अगर मुझे इस सौदेमें उतरना हो तो मुझे खुले तौरपर ऐसा बता देना चाहिए।'

उपरोक्त प्रस्ताव गुजरात-प्रान्तीय काँग्रेस कमेटीने २७ के विरुद्ध ३६ मतों से पास किया था। इसके सिवा ए. आइ. सी. सी. की जनवरी १९४२ की वर्धा मीटिंगमें उपरोक्त प्रस्तावके विरोधियोंका समाधान किया गया; तथा राजेन्द्र बाबूके पक्षने उसका अनुमोदन किया। 'टाइम्स ऑफ इंडिया' की १७ जनवरी '४२ की आवृत्तिमें इसके बारेमें निम्नलिखित विवरण दिया गया था—

'हमारे मतानुसार ऐसे समयमें देशको युद्धमें ढकेलना सचमुच एक बड़ी भूल होगी। इस प्रस्तावसे प्रतीत होता है कि हम यह मानते हैं कि दुश्मनका हथियारोंसे मुक़ाबला करना देशके लिये अच्छा नही है; साथ ही साथ हम यह भी मानते हैं कि, प्रस्तावमें 'हथियारोंसे सामना करने' का संकेत है उसका मतलब यह नहीं हैं कि हम आज ही हथियार उठालें। यह तो तब ही संभव है कि जब ब्रिटिश सरकार भारतको स्वतन्त्र करनेकी घोषणा करे और भारतकी समस्त सत्ता हमारे हाथोंमें सौंप दे; किन्तु इसकी संभावना या चिह्न आज दिखाई नहीं देते।'

अन्तमें यही निर्णय किया गया कि, गांधी और नेहरूजीके दोनों पक्षोंका एक संयुक्त मोर्चा ब्रिटिश साम्राज्यके विरुद्ध खड़ा किया जाए, और सरकारको समझौतेके लिए समझाया जाय।

इसी अवधि में दिसम्बर'४१ से मई'४२ के बीच, जबकि सर स्टेफर्ड क्रिप्स अपने समझौतों और निवेदनोंको लेकर भारत आये, तब युद्धजन्य

परिस्थितियोंमें आश्चर्यजनक परिवर्तन हो रहे थे । मलाया और सिंगापुरका पतन हो गया था, और जापानी बर्मामें प्रविष्ठ हो चुके थे । मार्चके मध्यतक रंगून भी गया और मार्चके अन्तमें क्रिप्स भारत आये ।

इन सहसा परिवर्तनोंने भारतको भयमें डाल दिया । बहुतसे ब्रिटिश-नीतिके श्रद्धालु, पुराने राजनीतिकोंकी ऐसी मान्यता थी कि जापानी और और नज़दीक आकर ब्रिटिशके शिकंजे में फँसते जा रहे हैं । मौक़ा देखकर ब्रिटिश उनपर टूटकर उन्हें रौंद डालेंगे । पर काँग्रेसकी यह मान्यता थी कि ब्रिटेन इस अवसर पर घबराकर समझौतेके लिये हाथ बढ़ायेगा । उस वक्त भारतकी जनता भी, चारों ओर जापानियोंकी विजय, और ब्रिटेनकी पराजयकी संभावना करती थी ।

इस तरफ संकेत करके पं० नेहरूने अपने १६ जुलाई ' ४२ के वक्तव्यमें कहा था कि—

'तीन-चार महीनोंसे मै देख रहा हूँ कि जनता जापानियोंके पक्षमें झुकती नज़र आ रही है; किन्तु जनताकी यह भावना जापानियोंका पक्ष नहीं करती । वास्तवमें जनतामें ब्रिटिश-विरोधी भावना इतनी प्रबल हो चुकी है कि हमें ज्ञात होता है कि वह जापानियोंका पक्ष ले रहीं है । हमें यह बिलकुल पसंद नहीं है कि भारत जापानियोंके साथ इस तरहकी सहानुभूति दिखाए । जापानके साथ मित्रता करनेका विचारही भयंकर है !

भारतमें क्रिप्सके आगमनका श्रेय किसे था ? स्वयं ब्रिटिश सरकारने ब्रिटिश जनताकी आलोचनाओं और दबावके कारण उन्हें भेजनेके लिए लाचार किया था, यह सब होते हुए परभी क्रिप्स तो चर्चिलके हाथका खिलौना था । लेनिनने भी एक जगह कहा है कि 'जब जब विरोध और क्रांति बढ़ती है तब तब शासक कोई दूसराही रास्ता अख्तियार करता है।" क्रिप्सको भी उसी रूपमें भारत भेजा गया था । ब्रिटिश साम्राज्यवादी भारतके जोशको ठंडा करना चाहतेथे वे साम्राज्यवादी कोई मामूली राजनीतिज्ञ नहीं हो सकते जिनके पास तीन सौ वर्षकी राजनीतिका अनुभव है ।

क्रिप्सने आकर भारतके विभिन्न कांग्रेसी और लीगी नेताओंके साथ मंत्रणाएँ

शुरू कीं किन्तु मूलमें जब उसके पास कुछ देनेके लिए था ही नहीं तो वे मंत्रणाएँ अपने आप टूट गईं। क्रिप्सने ब्रिटिश नीतिकी कैफियत देते हुए एक वक्तव्य प्रकट किया, जिसमें ब्रिटेनकी शुद्ध भावनाओंको समझानेका प्रयास किया गया था। उसने यह आक्षेप भी किया कि भारतके विभिन्न पक्षोंके नेता-गण उससे मंत्रणा करनेके लिए कई बार मिले; उन्होंने समान मार्गपर खड़े होकर एक दूसरेके दृष्टिकोणोंको समझानेका प्रयत्न किया किन्तु उनमेंसे कोई भी समझौते पर नहीं आ सका।

पंडित नेहरूको क्रिप्सकी इस राजखिलवाड़का आभास पहलेही हो चुका था, वे चौंक उठे। भारतीयोंको इस तरहकी गड़बड़में डालकर परेशान करनेकी साम्राज्यवादी नीतिकी झांकी उन्हें पहलेभी मिल चुकी थी। उन्होंने जनताको उस जालमें न फँसनेकी चेतावनी दी। ता. १२ एप्रिल ४२ के दिन एक प्रेस कॉन्फ्रेंसमें उन्होंने कहा कि—

'हमारे सम्मुख आज एक ऐसी परिस्थिति है कि कोई भी जिम्मेदार व्यक्ति इस समस्यामे टालमटोलकी बातें नहीं कर सकता। हमें वातावरणमें कड़ुआहट पैदा करना भी ठीक नहीं है क्यों कि कड़ुआहटके कारण हम गैर रास्ते चल पड़ेंगे और इस गम्भीर विरोधी समयमें हमारे आखिरी फैसले तक पहुँचने में गड़बड़ी पैदा करेंगे ,...

लेकिन हम यह जानते हैं कि क्रिप्सके वार्तालापका कोई परिणाम न निकला तब कांग्रेसके दोनों पक्षोंमें एकता हुई। युद्ध नजदीक आता जारहा था, जापानियोंका मुकाबला होना ही चाहिए: स्वतंत्र भारतकी दृष्टिसे कांग्रेस युद्धका मुक़ाबला करे इस व्यवस्था की ज़रूरत थी। तब पं. नेहरूने ता. १३ अप्रेल ४२ को एक वक्तव्यमें बताया कि—'आज कँाग्रेस कार्यकर्ताओं और सर्व साधारणको स्वरक्षा और व्यवस्थाका कार्यक्रम बनाना चाहिए और उस पर चलना चाहिए, शायद ऐसा वक्त भी आये कि हमें जापानसे गोरिल्ला युद्ध करना पड़े। मैं यह नहीं जानता कि कँाग्रेस क्या निर्णय करेगी, पर यह तो एक स्वरक्षा-समितिका बीजारोपण करनेकी बात है। हम जिस संस्थाकी योजना बना रहे हैं वह हमें वर्तमान पेचीदी परिस्थितियोंका मुकाबला करनेमें मदद देगी। आपसे मेरा यही निवेदन है कि आप किसीकी शरणागति मानकर शरणमें

न जाँएँ, और न दुश्मनोंको किसी तरहकी मदद करें। आप लोगोंको उनके साथ असहयोग करनेकी नीति अपनाना चाहिए, वैसेही उनके लिए जितनी रुकावटें डाली जा सकें, डालना चाहिए। हमारी सशस्त्र सेना ही उनका मुकाबला करेगी।

किन्तु पं. जवाहरकी ये बातें गांधीजी को न सुहाई; उन्होंने २६ एप्रिल के हरिजनमें पंडितजीकी उस नीतिके विरोधमें लिखा कि—'किसी भी तरहके अधिकार प्राप्तिके बिना, वैसे ही फिलहाल ब्रिटिशके साथ समझौतेमें सफलता न मिलनेके बाद, उसके युद्ध-प्रयत्नोंमें इस तरह हिंसक तरीकोंसे मदद करना, देशको नीचा दिखानेकी बात होगी।'

पुनः ए. आइ. सी. सी. की इलाहाबादकी बैठकमें, ब्रिटिश सरकारके विरुद्ध जोशीले भाषण हुए—'अब हम सरकारसे समझौता करनेके लिए न जाएँगे... उस वक्त कांग्रेसके मन्तव्यों और नीतिमें परिवर्तन हुए थे। उपरोक्त बैठकमें पं. पंतने मुख्य प्रस्ताव पेश करते हुए बताया कि—

युद्धके वक्त देशकी रक्षा दूसरे ही तरीकेसे की जाती है: मैं मानता हूँ कि अगर हमें वैसा अवसर मिला होता कि हम अपनी आज़ादी और बलिदानकी भावनाके अनुकूल कुछ कर सकते, तो अवश्य देशकी रक्षा करते। पर वह अवसर हमें नहीं दिया गया, इसलिए आइन्दा जो कुछ भी होगा वह ब्रिटिश सरकारका कलंक होगा। सरकार हमें स्वाभिमानके साथ जीने तो नही देती, पर मरने भी नहीं देती!'

इस तरह वक्त वक्त पर गांधीजीके तटस्थ पक्ष और जवाहरके प्रगति पक्षमें मतभेद होता रहा, किन्तु अन्तमें पंडितजीको ही झुकना पड़ा। हिंसक तरीकों से जापानियोंका मुकाबला करनेकी बात गांधीजीको न जँचनेसे, उन्हें छोड़ देनी पड़ी। सरदार पटेलने विभिन्न पक्षोंके मतभेदोंका अवलोकन करते हुए बताया कि—

'जबसे युद्ध प्रारम्भ हुआ, तबसे दोनों पक्षोंने संयुक्त होकर कार्यको आगे बढ़ाया है, किन्तु इस अवसरपर ऐसा नहीं हो सकता। गांधीजी अपने निर्णय पर अटल हैं। यदि उनका यह निर्णय कार्य-समितिके किसी सदस्यको ठीक

न लगता, तो मुझे भी ठीक न लगता। मैंने तो अपने आपको गांधीजीके हाथोंमें सौंप दिया है। ऐसी विचित्र परिस्थितिमें जो सलाह वे देते हैं, वही मुझे सच्ची मालूम होती है। ऐसा मतभेद ए. आइ. सी. सी. की बम्बईकी बैठकमें भी उपस्थित हुआ था; उस वक्त दूसरे ही ढंगसे सरकारसे सम्पर्क स्थापित करनेकी बात थी। उस वक्त और अधिक सलाह मशविरे या समझौतेके लिए कांग्रेसने अपने द्वार बंदकर लिए थे। किन्तु बारडोलीकी बैठकमें यह स्पष्ट किया गया था कि, ऐसे कई विषय हैं जिनपर अभी भी वार्तालाप किया जा सकता है। मित्रराष्ट्रोंसे हमारी सहानुभूति थी। किन्तु अब ऐसा मौका आ गया है कि हमें कहना पड़ता है, कि समझौतेकी बातोंके लिए कांग्रेसके द्वार अब बंद किए जा चुके है। बार बार हमारा अपमान किये जानेसे हमने यह क़दम बढ़ाया है!'

इस प्रकार कांग्रेस और सरकारके समझौतेकी बातोंपर बाधायें बढ़ती जा रही थीं। गांधीजी, जिन्होंने हमेशा ही ब्रिटेनको मित्रताकी आंखोंसे देखा था, की चिढ़ भी बढ़ रही थी। उस वक्त उन्होंने २६ एप्रिलके 'हरिजन' में लिखा कि—

सरकारने जितनी योजनायें भारतकी तथाकथित रक्षाके लिए की है उनमें कहीं भी मुझे आज़ादीके दर्शन नहीं होते। मुझे तो ऐसा लगता है कि ये सब रक्षाकी तैयारियां ब्रिटिश साम्राज्यकी रक्षाके लिए ही की गई हैं। जिस तरह ब्रिटेनको सिंगापुर छोड़ देना पड़ा, उसी तरह अगर वे भारतको भी उसकी किस्मतपर छोड़कर चले जायँ, तो शायद अहिंसक भारतको कुछ भी खोना नहीं पड़ेगा। शायद ऐसा भी हो कि जापानी भारतको स्वशासन करनेके लिए कहें।'

इसके बाद ता: १४ वीं के दिन वर्धामें कांग्रेस कार्य समितिकी बैठक हुई जिसमें अगस्त प्रस्तावकी रूपरेखा तैयार की गई। प्रस्तावमें कहा गया—

'क्रिप्स-प्रस्तावकी अस्वीकृतिसे जो निराशा उत्पन्न हुई है, साथ ही साथ यह स्पष्ट हो जानेपर कि ब्रिटेन, भारतको अपने शिकंजोंमें से छोड़ना नहीं चाहता। उनकी इस नीतिसे भारतकी जनतामें असंतोषका वातावरण फैल रहा

है, और ब्रिटेनके प्रति विरोधकी भावना तीव्र होती जा रही है। कांग्रेस इस भावनाको शंकाकी दृष्टिसे देखती है; शायद जनता इस तरह शांतिका मार्ग छोड़कर क्रांतिपर भी उतर जाय !'

इस प्रस्तावको कुछ संशोधनोंके साथ बम्बईकी बैठकमें पास किया गया। वह इस प्रकार था—'ब्रिटिश शासनके भारतसे हटा लेनेपर ही युद्ध, विजय, अथवा लोकतन्त्रकी सफलता निर्भर करती है। स्वतन्त्र भारत, नाजियों, फासिस्टों और साम्राज्यवादियोंके पंजोंमें से विश्वको छुड़ानेके लिए अपनी समस्त शक्तिका उपयोग करेगा; जिसके द्वारा युद्धके भविष्यपर निर्णयात्मक प्रभाव पड़ेगा। इतना ही नहीं, संयुक्तराष्ट्र, जिनके साथ भारत भी गौरवान्वित होकर खड़ा होगा, वह अपने साथ समस्त रौंदी हुई मानवताको भी लाकर खड़ी करेगा और विश्वभरमें आंतमबलकी प्रेरणाओंको मुखरित करेगा। इसलिए अखिल भारतवर्षीय कांग्रेस कमेटी, ब्रिटेनको, भारतपर से अपना शासन हटा लेनेकी माग करता है। स्वतन्त्र भारतकी घोषणा की जानेके बाद एक अस्थायी राष्ट्रीय सरकारकी स्थापना की जायेगी, और भारत, संयुक्त राष्ट्रों का साथी बनकर उनकी कठिनाइयों, संयुक्तशक्ति, और आजादीकी लड़ाईमें अपना सब कुछ लगाकर उनके साथ खड़ा रहेगा। यह अस्थायी राष्ट्रीय सरकार देशके प्रमुख पक्षोंकी सम्मतिसे स्थापित की जाएगी, जिसका मुख्य काम आनेवाले आक्रमणोंका सेना और अहिंसक तरीकोंसे सामना करके भारतकी रक्षा करना ही रहेगा। युद्ध मोर्चेपर गये हुये सैनिकों, कारखानोंमें काम करनेवाले मजदूरों, और दूसरे व्यक्तियोंकी सब जरूरतें पूरी की जायेंगी, और वास्तविक रूपमें उनके हाथोंमें ही सत्ता और उसका अंकुश रहेगा।

इसलिए काँग्रेस इस अन्तिम अवसर पर, ब्रिटेन और संयुक्तराष्ट्रोंसे निवेदन करती है कि वे विश्व-स्वतन्त्रताकी भावनाके लिए भारतको स्वतन्त्र करें। कमेटी यह अनुभव करती है कि वर्तमान साम्राज्यवादी सरकार जो इस देशपर अंकुश जमाये है, और केवल अपने हितोंके लिए ही शासन कर रही है, वह इस देशके लिए मानवताके नामपर, स्वभाग्य-निर्णयके प्रयत्नोंमें बाधा न डाले !

इसलिए यह समिति निर्णय करती है कि, भारतकी आज़ादी और स्वभाग्य-निर्णयके उसके अधिकारोंको पानेके लिए, अहिंसाके सिद्धांतोंके आधारपर एक सामुदायिक और विशाल आन्दोलनकी योजना बनाई जाय; जिससे इस देशने अपने २२ वर्षके शांत आन्दोलनमें जो अहिंसात्मक शक्ति इकट्ठी की गई है, उसका उपयोग किया जाय। इस प्रकारका असहयोग महात्मा गांधी द्वारा परिचालित किया जाना उपयुक्त होनेके कारण, यह समिति गांधीजीसे निवेदन करती है कि वे इस कार्यक्रमका नेतृत्व अपने हाथोंमें लें और आगेके लिए भी अँगुली-निर्देश करें।

इसके सिवा समितिने भारतकी जनतासे भी निवेदन किया कि, वह आगामी आन्दोलनके वक्त होनेवाली तकलीफोंको सहन करनेका अभ्यास करे, और गांधीजीके नेतृत्वमें संगठित बने; तथा भारतीय स्वतन्त्रताके सच्चे सैनिक बनकर अनुशासनपूर्वक उनके आदेशोंपर अमल करे। उसे यह याद रहना चाहिए कि आगामी आन्दोलनका मुख्य आधार अहिंसा है। शायद ऐसा भी समय आ सकता है जब प्रत्येक व्यक्ति गांधीजीके आदेशोंको समयपर न पा सके, और समितिकी प्रांतीय शाखाओंके सब दफ्तर भी एकाएक बन्द हो जाएँ। यदि ऐसा हो तो हर एक स्त्री और पुरुषका, जिसने कि इस आन्दोलन में सक्रिय भाग लिया हो, यह फ़र्ज़ है कि साधारण सूचनाएँ मिलते ही वह व्यक्तिगतरूपसे अपने आगामी कार्यक्रमकी रूपरेखा तैयार करे और उसपर अमल करे। प्रत्येक भारतीयको, जो कि देशकी आज़ादीकी भावना रखता है, आज़ादीके बीहड़ मार्गमें स्वयं अपना मार्गदर्शक बनना है।

अन्तमें यह अखिल भारतवर्षीय काँग्रेस कमेटी, जिसने स्वतन्त्र भारतकी भावी सरकार बनानेके अपने दृष्टिकोणको यहाँ प्रस्तुत किया है, उसे और स्पष्ट करते हुए बताती है कि इस सामूहिक आन्दोलनके द्वारा काँग्रेसका ध्येय खास सत्ताकी बागडोर अपने हाथमें लेनेका नहीं है, बल्कि ऐसी जो सत्ता प्राप्त होगी वह भारतकी समस्त जनताके हाथोंमें उपयुक्त होगी।

× × ×

यह अगस्त-प्रस्ताव ए. आइ. सी. सी. की बम्बई बैठकमें सर्वानुमतिसे

पास किया गया, फिर भी कांग्रेसने जिस आन्दोलनकी पूर्वसूचना दे दी थी उसे शुरू करनेमें गांधीजीने ढील की । उनकी इच्छा यह नहीं थी कि किसी भी सामूहिक आन्दोलनके उभड़नेसे देशकी स्थिति डाँवाडोल हो । उन्हें यह देखना था कि प्रस्ताव पास करनेसे देश और ब्रिटिश सरकारपर क्या असर होता है? बहुत गहराईमें उनकी ऐसी भी इच्छा थी कि यदि अब भी सरकार चाहे और समझौतेका हाथ बढ़ाये तो उसकी प्रतीक्षा की जाय ।

पर गांधीजीकी रुककर राह देखनेकी इच्छाका सरकारने उल्टा अर्थ लगाया। उसे लगा कि यह प्रस्ताव पास करके कांग्रेस भीतर ही लड़ाईकी तैयारी कर रही है । इसलिए सरकारने, जिसकी समझौतेकी इच्छा पहिलेसे ही न थी, गांधीजी वग़ैरह देशके नेताओंकी एक साथ गिरफ्तारी की; प्रत्याक्रमण का पहला प्रहार किया, और गांधीजीकी आशा टूट गई ।

उनकी गिरफ्तारीके थोड़े ही दिन बाद ता. १४ अगस्ट १९४२ के दिन गांधीजीने वायसरायको जो पत्र लिखा था, उसपरसे उनकी मनोभावनाका पता चलता है । उन्होंने लिखा था कि—'सरकारको तबतक धैर्य धारण करना चाहिए था कि, जबतक कि मैं सामूहिक आन्दोलनकी शुरुआत नहीं करता; किसी भी निर्णयात्मक क़दम उठानेके पहले, उसे एक पत्र द्वारा आपको सूचित करनेकी मेरी इच्छा थी, ऐसा मैंने ज़ाहिर भी किया था । इस पत्रके द्वारा कांग्रेसका केस आपके सामने रखकर निष्पक्ष जाँचकी माँग करनेकी मेरी इच्छा थी । आप यह तो जानते ही हैं कि कांग्रेस अपनी माँगोंमें जो कुछ त्रुटियाँ होंगी उसे दूर करके ही आपके सामने रखती है । और यदि मुझे भी मौक़ा दिया गया होता, तो हमारे मार्गमें आनेवाली कठिनाइयोंको दूर करनेके लिए मैं, जितना संभव होता, करता ।'

९ अगस्तको गांधीजीकी गिरफ्तारीके बाद यकायक देशका वातावरण उग्र हो गया; जनआन्दोलन प्रारम्भ हो गया । काँग्रेसकी कई शाखाओंने अज्ञात रह कर क्रांतिका मार्ग प्रशस्त किया । उन्होंने आम जनताको निर्देश करनेके लिए आदेश-पत्र (फॉर्म) प्रकट करने शुरू किये । रात रात भर

छुपी साइक्लोस्टाइल मशीनें गूँजती रहतीं। स्वतंत्रता-संग्राम प्रारम्भ हो चुका था, और सरकारने भी उसका दमन करनेके लिए सशस्त्र मुक़ाबिला किया; निहत्थे स्त्री और बच्चे पुलिसकी गोलियोंके शिकार हुए। जब नेताओंके जेलसे छूटनेके बाद सितम्बर १९४५ में बंबईमें, ए. आइ. सी. सी. की बैठक हुई तब उसमें '४२ के जन-आन्दोलनके लिए, राष्ट्रका अभिनन्दन करते हुए, एक प्रस्ताव पेश करके गांधीजीने कहा कि—'यह तो सर्वविदित है कि ८ अगस्त' ४२ के दिन ए. आइ. सी. सी. की बंबई बैठकमें कॉंग्रेसने, मित्रराष्ट्रोंसे, विश्व-स्वतन्त्रताके लिए जो सहयोगकी इच्छा प्रदर्शित की थी, उसे कुचल दिया गया; और जब भारत की समस्याके निराकरणके कार्यक्रमके निश्चयके बाद सरकारसे जवाब मांगा गया तब सरकारने जनतापर चारों ओरसे सशस्त्र प्रहार करके उसका जवाब दिया; और जनताको युद्धजनित कष्टों और सरकारके जुल्मोंकी दोहरी मार सहनी पड़ी।'

जनआन्दोलन और उसके बाद

गांधीजी तथा दूसरे नेताओंकी गिरफ्तारीसे जनता ब्रिटिश-राज पर क्रुद्ध हो गई थी; उस वक्त उन्हें किसी नेताकी ज़रूरत थी जो उन्हें सही रास्ते पर ले जाता। किन्तु वे सब तो जेलके सीखचोंमें बन्द पड़े थे। लोगोंने उत्तेजित होकर टेलीफोनके तार काट डाले, वाहन-व्यवहारको तितर बितर कर दिया, रेलकी पटरियोंको उखाड़ डाला; रेलके छोटे छोटे पुलोंको उड़ा डाला लेटर बक्सोंको जला डाला और इसी तरहकी कई हिंसात्मक कार्रवाइयाँ कीं।

और यह स्वाभाविक भी था कि जनता यह सब करनेको बाध्य होती; उसे कोई नेतृत्व करने वाला न मिला जिससे वह हिंसाकी ओर झुकी। जनता की उस समयकी उत्तेजना और भावना अवर्णनीय थी; अभी अभी पं. जवाहर-लालने भी कहा है कि 'अगर मैं १९४२ के आन्दोलनके वक्त जेलसे बाहर होता तो, यह कह नहीं सकता कि मैं क्या करता।'

प्रतिबन्धोंके गहन पर्दोंको चीर कर समय समय पर कई आदेशपत्र गाँधीजीकी सूचनाओंके साथ बाहर आने लगे थे; उन्होंने लोगोंको हड़ताल करनेका आदेश दिया और खुद चौबीस घंटेके अनशन व्रतके निर्णयके साथ कार्य करने लगे। एक आदेश पत्रमें गाँधीजीके आदेशके साथ इस प्रकार लिखा था—

'इस हड़तालमें सरकारी कचहरियोंमें काम करते हुए क्लर्कों सरकारी कारखानोंने काम करने वाले मज़दूरों, रेलवे और पोष्ट आफिसोंमें काम करने वालोंके लिए सम्मिलित होनेकी जरूरत नहीं है। हमारा स्पष्ट उद्देश्य यह है कि जापानी, नाज़ी फ़ासिष्ट वगैरहका आक्रमण और ब्रिटिश साम्राज्यवादका अंकुश हम सहन नहीं कर सकते।'

यह सच था कि लोग हिंसाकी ओर झुके थे, फिर भी महात्माजीने अहिं-सक आन्दोलन पर ही जोर दिया था; उन्हें यह ज़रा भी पसन्द न था कि लोग हिंसात्मक कार्य करें और उसमें उनका नाम ले जाकर मिलाएँ। इसलिए जब

बिहारके एक प्रमुख कार्यकर्ता अनुग्रह बाबूने जेलमें उनसे ... और आन्दोलनके लिए उनसे आदेश मांगा तो गाँधीजीने उन्हें जो राय दी थी वह 'सर्च लाइट' पत्र की ता. १० फरवरी १९४५ की आवृत्तिमें प्रगट की गई थी । वह निम्न-प्रकार थी—

मुझे गाँधीजीने आन्दोलनके बारेमें आदेश देते हुए कहा कि आप लोग अपने प्रत्येक कार्यमें अहिंसक ही रहें, उन्होंने कहीं भी हिंसात्मक या तोड़ फोड़की कार्यवाइयोंके लिए अपनी सम्मिति नहीं दी ।

उन्होंने जोर देकर यह कहा था कि काँग्रेस कार्यकर्ताओंको बन सके वहाँ तक तोड़-फोड़की घटनाओंसे दूर रहना चाहिए । यद्यपि सरकारने हमारे बहुत से निर्दोष व्यक्तियोंको बिना सबूत जेलोंमें बन्द कर दिया है और उनके सिर अत्याचारोंका दोष थोपा है वह तो लोगोंकी तोड़ फोड़की प्रवृतिसे भी अधिक घृणात्मक है । सरकारकी ऐसी कार्यवाहियोंका विरोध होना ही चाहिए और यह अहिंसाकी दृष्टिसे गलत नहीं है, इसके सिवा उन्होंने कहा कि यदि हमने तोड़ फोड़की प्रवृतिको उत्तेजित किया तो हम जो राजसत्ता स्थापित करेंगे वह भी ऐसी ही अव्यवस्थित होगी । इस लिए ऐसी प्रवृतियोंको मानने वालोंका हम सहकार नहीं कर सकते; भले ही वे फिर हमें ही मार डालनेकी धमकी क्यों न दें ।'

कुछ ही दिन पहले सोशियल वेलफेअर नामके अंग्रेजी साप्ताहिकमें श्री. कन्हैयालाल मुंशीने अपने सम्पादकीय लेखमें, कांग्रेसियोंको इस तरहकी हिंसात्मक कार्यवाहियोंसे दूर रहनेकी सलाह दी थी, उन्होंने लिखा कि—

यदि हमें स्वराज्य प्राप्त करना हो और राष्ट्रीय सरकारकी स्थापना करना हो तो अपनी बुद्धिको अस्थिर नहीं होने देना चाहिए । सशस्त्र सेनाएँ, नौका दल और हवाई सेना, सरकारके प्रमुख और प्रबल हथियार हैं; उनका महत्व उनके अनुशासनमें ही है । यदि अनुशासन भंग होता है तो राज्य और समाज दोनों असभ्य और जंगली वन जायँ । यदि क्रांतिमें भी किसी सेनाका कोई खास हिस्सा स्वदेशाभिमानियोंके साथ मिल जाय तो यह कार्य अनुशासन हीन नहीं कहा जा सकता । सेनाकी तो अपनी मूल अनुशासनकी भावनासे सेना ही कही जायगी; इसमें परिवर्तन तो सिर्फ नियतका ही होता है'

किन्तु ४२ के आन्दोलनमें लोगोंने बुद्धिकी स्थिरता और अनुशासन दोनोंको खो दिया था; क्योंकि वह वक्त ही अस्त व्यस्त था। देशके अनुभवी नेताओंके जेलमें चले जानेसे और सही मार्ग-दर्शक न मिलनेके कारण बहुतसे युवक विद्रोही नेतागण प्रकट हुए, और उन सबोंमें मुख्य थीं। वीरांगना अरुणा अगस्त–आन्दोलन नवीन–क्रांतिकी एक चिनगारी थी; सारे भारतमें उस वक्त नया आवेश व्याप्त हो रहा था। इतिहासमें एक अभूतपूर्व अध्याय जोड़ा गया; लोगोंको स्पष्ट प्रतीत होने लगा कि आज़ादी और नज़दीक आ रही है, इतनी नज़दीक कि हम उसे अभी हाथोंमें ले लेंगे। उस वक्त सरकारके भीषण दमन के बावजूद भी जनताका वह जोश न दबा, बल्कि और अधिक तेज़ीसे फुफ-कार उठा!

इसके साथ ही एक ओर भारत-व्यापी अकालकी भीषणता दिखाई दे रही थी। बंगालमें हर रोज़ हजारों आदमी कालके गालमें समा रहे थे। जापानी सेना भारतकी ज़मीनको रौंद डालनेके लिए दिन प्रति-दिन आगे बढ़ती जा रही थी; भारत सरकार उन्हें हटानेकी भरसक कोशिश कर रही थी; उसी वक्त अगस्त क्रांतिकी उत्पत्ति हुई।

अरुणा और उनके नवयुवक साथियोंने जब देखा कि यदि उन्हें भी अन्य नेताओंकी तरह जेलमें डाल दिया जायगा तो क्रांतिकी ये सब काररवा-इयाँ एकाएक बंद हो जायँगी; तब उन्होंने अज्ञातवासका निश्चय किया; उनका विचार तीन सप्ताहमें ही स्वतन्त्रता छीन लेना था!

उन्हें पहली बार १९४२ में सोई हुई जनशक्तिका आभास मिला। सरकारके सशस्त्र दमनका सामना करके निःशस्त्र जनताने यह दिखा दिया कि जेलमें बंद हो जाना असलियतसे दूर होने जैसा था।

सारा भारत यह जानता है कि उस वक्त बलिया, सतारा, भागलपुर, मिदनापुर आदिकी प्रजाने क्या किया, और सरकारके जुल्मोंका सामना किस तरह किया। उस वक्त जनतामें देश-प्रेमका उन्नत जीवन लहरा रहता था। राष्ट्र-प्रेमकी एक ऐसी आँधी उठी थी, जिसका सामना करनेकी शक्ति बहुत मँहगी थी। उस वक्त जनता किसी भी राष्ट्रविरोधी प्रवृत्तिको मानने के लिए तैयार न थी।

इस लोक-क्रांतिका प्रथम ज्वार अहमदाबादमें आया। सरकारकी दमन नीतिका विरोध करनेके लिए जो जुलूस निकाला गया उसपर पुलिसने निर्दयता पूर्वक गोली चलाई जिसमें उमाभाई कड़िया नामका एक बीस वर्षका युवक शहीद हुआ। क्रांतिका पहला क़दम आगे बढ़ा; वह युवक जुलूस और पुलिस बीचमें खड़ा हुआ था; पुलिसने गोली चलाई और पहले पहल उमाभाई काम आया।

गुप्त रूपसे छोटे बड़े सभी काँग्रेसी कार्यकर्त्ताओंको गिरफ़्तार करनेका हुक्म जारी किया गया था। पहले तो काँग्रेस कार्यसमितिके सभी सदस्योंको गिरफ्तार किया गया। बहुतसे साधारण कार्यकर्त्तागण ग़ायब हो गए; किंतु उनके ग़ायब हो जानेसे सरकारकी दृष्टिमें उनकी भीषणता और बढ़ने लगी। उन अज्ञात कार्यकर्त्ताओंने गुप्त क्रांतिकारी कार्योंका प्रारम्भ किया; और उस वातावरणके अनुकूल नौकरशाहीके विरुद्ध जिस प्रकार आन्दोलन करना उपयुक्त था वैसा ही किया गया। प्रमुख तीन क्रांतिकारी महिलाओंमेंसे दो को गिरफ़्तार कर लिया, जिनके नाम उषा मेहता और एलाइस एलवर्स थे; और तीसरी, जो कि आजकल हमारे लिए बहुत ही प्रसिद्ध हो चुकी हैं, वह वीरांगना अरुणा, सरकारकी भरसक छानबीनके बाद भी कहीं मिल न सकीं। वे कभी यहाँ, और कभी वहाँ इस तरह सभी जगह दिखाई देती थीं, फिर भी गुप्त पुलिसका पंजा उन तक नहीं पहुँच सका था। उनके घरपर सरकारी नोटिस चिपकाई गई थी और सरकारकी शरणमें, एक खास मुद्दत तक आनेका हुक़्म निकाला गया था। वह मुद्दत ख़त्म हो जानेपर भी अरुणा सरकारकी शरणमें न गई, वे वहीं छुपी रहीं, जहाँ पहले थी। उनके घर और मोटर पर सरकारने कब्जा कर लिया। उनके विरुद्ध तीन-तीन केस चलानेका सरकारने निश्चय किया। बहुतसे सरकारी आदमियोंने जेलमें दूसरे राजनैतिक कैदियोंके साथ रहकर उनकी अज्ञात बातोंको जाननेका भरसक प्रयत्न किया; किन्तु सरकार जिस रमणीका पता लगानेकी कोशिश कर रही थी वह गुप्त पुलिससे भी अधिक चालाक थी।

यह वह वक्त था जब उनके पति श्री. आसफअली गंभीर बीमारीमें पड़े थे। अरुणा बहुत चाहती थीं कि वे उनके पास रहें किंतु उन्हें उनसे दूर दूर

भागना पड़ता था, क्योंकि गुप्त पुलिस श्री० आसफअलीकी प्रत्येक कार्रवाई पर कड़ी नज़र रख रही थी।

जन आन्दोलनके सूत्रधार तीन प्रमुख व्यक्ति थे—श्री० अरुणा आसफ-अली, श्री० जयप्रकाश नारायण और डॉ० राममनोहर लोहिया। उषा मेहता भी शक्तिभर कार्य कर रही थी। ये सब अज्ञातवासी कार्यकर्त्तागण समाजवादी हैं और उस वक्त उनका यह दृढ़ निश्चय था कि वे क्रांतिकी तेज़ीको बढ़ायेंगे, लोगोंमें स्वतन्त्रताकी भावनाको जागृत करेंगे और ऐसा करनेमें यदि उन्हें शहीद भी होना पड़े तो भी स्वतन्त्रताकी भावनाओंको प्रज्ज्वलित करनेके लिए वे ऐसा भी करेंगे!

१९४२ के जन आन्दोलनके वक्त कम्युनिस्टोंने बार बार रुकावटें डाली, और अपनी हीन मनोवृत्तिका परिचय दिया। उनका कहना था कि काँग्रेस ने जनताके समक्ष कोई खास कार्यक्रम न रखा था इसलिए देशमें अराज-कता फैल गई और लोगोंने जो चाहा सो किया। पर यह आरोप बिलकुल निराधार है। ए. आई. सी. सी. की बंबई बैठकमें अगस्त-प्रस्तावके बारेमें यह बात स्पष्ट कर दी गई थी कि प्रत्येक व्यक्ति कुछ भी करनेके लिए स्वतन्त्र होने कारण, 'करो या मरो' के काँग्रेसके आदेशके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति अपना कार्यक्रम बना ले।

उपर्युक्त युवक क्रांतिकारियोंने देशमें जब क्रांति-युद्धका प्रारम्भ किया तब उन्होंने उस व्यक्ति स्वातन्त्र्यको मुख्य स्थान दिया था। यद्यपि गांधीजीको इन क्रांतिकारियोंकी बहुत हिंसात्मक प्रकृतियाँ पसन्द नहीं थीं, और उन्होंने अंत तक ऐसी काररवाइयोंका विरोध किया। गांधीजीने स्वयं अपने अति निकट सहकारी डॉ० किशोरलाल मश्रूवालाके एक हिंसात्मक वक्तव्यकी खरी आलोचना की थी, इसलिए वे इन नवयुवक क्रांतिकारियोंकी प्रवृत्तियोंको भी सहन नहीं कर सके थे। पर इसीलिए क्रांतिकारीगण भी उनके साथ झगड़ना नहीं चाहते थे, उन्हें कार्य करना था, न कि मतभेद।

श्री० राममनोहर लोहियाने ९ अगस्तको इस आन्दोलनके बारेमें एक वक्तव्य प्रकट किया था, जिसमें उपर्युक्त स्थितिका स्पष्टीकरण है; उन्होंने

बताया कि—"यदि गांधीजी हमारे क्रांतिकारी आन्दोलनकी निंदा करते हैं तो हम उनसे झगड़ने न बैठेंगे। यद्यपि मुझे कई बार उनसे, और काँग्रेस की कार्य समितिसे झगड़नेकी इच्छा होती है, पर यह बात मुझे न्याय-युक्त मालूम नहीं होती। कार्य समिति कुछ यह सिद्ध करना नहीं चाहती कि गांधीजी का यह विरोध सार्वजनिक हित या उन्नतिके लिए है, और हम भी कार्य-समितिको इसके लिए दोष नहीं दे सकते। समिति यह कहती है कि जो लोग इस प्रकारकी क्रांतिका विरोध कर रहे हैं, वे पच्चीस वर्षोंसे काँग्रेसके लिए अकथ परिश्रम कर रहे हैं, और कई तरहके बलिदान किये हैं; हम भी यही चाहते हैं कि ये नेतागण अपने अनुभवों और बुद्धिके बलपर हमें राजनैतिक क्षेत्रमें पथ निर्देश करें, किन्तु हम अपनी क्रांतिकारी कारवाइयोंके लिए उन्हें जवाबदार नहीं मानते!

क्रांतिदलके एक दूसरे नेता श्री० जयप्रकाश नारायणने भी आज़ादीके सैनिकोंके नाम एक खुले पत्रमें यह बताया था कि क्रांतिदल किस तरह उत्तरोत्तर बढ़ता गया; उन्होंने लिखा कि—

"पहले तो राष्ट्रवादी क्रांतिकारियोंकी ऐसी कोई खास संस्था ही नहीं थी कि जो लोगोंको आन्दोलनके सम्बन्धमें कोई निर्देश करे; काँग्रेसको भी यह ठीक मालूम न था कि यह आन्दोलन इतना विशाल रूप धारण करेगा।

धीरे धीरे क्रांतिका क्षेत्र इतना विशाल हो गया कि बड़े बड़े राष्ट्रीय नेतागण और विचारक भी आश्चर्यमें पड़ गये। उन्हें यह भी लगा कि यह ठीक था। जब उनका ध्येय आज़ादी था तब उसमें ग़लत था ही क्या? हम जानते हैं कि साधारणतया सभी कांग्रेसी स्वदेशाभिमानी होते हैं; और उसी भावनासे वे काँग्रेसमें सम्मिलित भी होते हैं, और किसी भी देशके कार्यके लिए उन्हे कष्टोंका सामना भी करना पड़ता है; और वही उसे राष्ट्रवादी बना देता है। उसे किसी राजनैतिक आदर्शका दिग्दर्शन नहीं मिलता; उसका समय अधिकांशमें राष्ट्रीय समाचारपत्र पढ़नेमें ही व्यतीत होता है; किन्तु उसका निर्माण तो कड़ुए अनुभवों और यातनाओंके बीच ही होता है। ऐसे कार्य-कर्त्ताओंने ही क्रांति-दलकी रचना की है और क्रांतिके वेगको प्रबल बनाया है।

ज़नता को इन्हीं नये कार्यकर्त्ताओंने आंदोलन का निर्देश किया और सूचनाएँ दीं। श्री० जयप्रकाश नारायण ने आजादी के सैनिकों को लिखे हुए एक दूसरे पत्र में भी लिखा कि—

कुछ महीनों पहले गांधी जी और वायसराय में जो पत्र-व्यवहार हुआ है उससे एक विषम समस्या उत्पन्न हो गई है। लोग हिंसा और अहिंसाके बीच भूल रहे हैं। मुझे लगता है कि ऐसे अवसर पर हिंसा और अहिंसा की बातें करना निरर्थक है। आज़ादी का प्रत्येक सैनिक जो उसे ठीक लगे वह करने के लिए स्वतन्त्र है: जिसे दूसरे मार्ग पर चलना हो वे वैसा कर सकते हैं: उन्हें सिर्फ यही देखना है कि वे एक दूसरे से टकरा न जायँ। और जहां कार्यसिद्धि का प्रश्न 'करो या मरो' पर निर्भर करता है वहां तो फिर टक्कर का प्रश्न ही नहीं रहता।'

क्रांतिकारियों ने ता० ६ अगस्त को देश में एक सामूहिक हड़ताल करने की घोषणा की। मजदूरों से निवेदन किया गया कि वे कामधंदों और वाहन-व्यवहार में मदद न दें; किन्तु कम्युनिस्टों ने उसका अनुमोदन न किया, फिर भी परिणाम ठीक ही निकला। ए. आइ. सी. सी. ने भारतीय मजदूरों से साधिकार जो निवेदन किया था, वह निम्नलिखित था—'शायद आप मजदूरों को, कम्युनिस्ट यह समझाते होंगे कि इस सामूहिक हड़ताल से मित्र राष्ट्रों की युद्ध-व्यवस्था में खलल पड़ेगा; किन्तु तब हमारे सँरक्षण का क्या होगा? इंग्लैंड हमारे सँरक्षण का प्रयत्न तो पहले से ही तोड़ चुका है। और उसके इस कार्य में मित्रराष्ट्र उसे मदद भी करते रहे हैं। क्रांति समय की प्रतीक्षा करके बैठीं नहीं रहती। आपने जिस तरह काम धंदा बंद करके कारखानों को तिलांजलि दी है उसके लिए हम आप का अभिनन्दन करते हैं। यदि आपने इसी तरह क्रांति आंदोलन में मदद दी तो अंत में हम विजयी होंगे!'

अगस्त १६४२ के बाद के दिन बहुत मुश्किल के थे। देश में अव्यवस्था और अन्न संकट की परिस्थिति उत्पन्न हो गई थी। अक्टूबर महीनेमें सरकार युद्ध में व्यस्त होने के कारण यह सब जानते हुए भी उसके निराकरण की व्यवस्था न कर सकी।

वह ऐसी परिस्थिति थी जब सभी भारतीय ब्रिटिश सरकार पर कुपित थे; और समाज की स्थिति भी ऐसी ही थी कि एक व्यक्ति दूसरे को हड़पने की सोच रहा था; क्योंकि 'काले बाजार' का प्रमाण बहुत बढ़ गया था। हर कोई धनवान होना चाहता था। शिक्षित वर्ग ने तीसरा ही मार्ग पकड़ा; इधर कांग्रेस-आंदोलन में मदद देना और उधर भीतर ही भीतर 'काला बाजार' करके धन कमाना। उनके हिसाब से पुरानी दुनिया नष्ट हो चुकी थी और साथ ही साथ राजनीति और संस्कृति भी। उनके लिए एक नया संसार पैदा हुआ था, जिसमें उनका अधिकार था और जो चाहे सो कर सकते थे। हमारे लिए इससे बढ़कर शर्म की और कोई बात नहीं, और यह लिखना भी उससे कम लज्जाजनक नहीं है। प्रत्येक घर में व्यक्तियों का परस्पर द्वन्द्व चल रहा था, और प्रत्येक व्यक्तिको किसी बात का लोभ था। किसी का कोई सम्बन्धी अधिक रिश्वत देकर माल न ले जाए, इसकी फिक्र उन्हें हमेशा घेरे रहती थी। कोई अपरिचित लक्ष्मीपति किसानों को लोभ देकर अनाज भंडार में न भर ले इसकी भी उन्हें कम चिन्ता न थी।'

'क्रांति कारियों को आगे कदम बढ़ाना चाहिए' इस शीर्षक के एक आदेश-पत्र में डॉ० राममनोहर लोहिया ने इस परिस्थिति पर प्रकाश डालते हुए लिखा था कि—'गरीब जनता यह न समझे कि अनाज के संग्रह और नफाखोरी के लिए सिर्फ सरकार ही जिम्मेदार है। बहुत से 'सभ्य' कहे जाने वाले लोग, जो अपने को कांग्रेसी बताते हैं वे भी इन कामों से अछूते नहीं हैं, क्योंकि उन्हें भी युद्ध के पर्दे के पीछे नफा कमा कर धनवान बनना है।'

इस तरह के 'काल-बाजारों' से जब जनता पिस रही थी, तो उधर जापान के आक्रमण का अंदेशा भी बढ़ता जा रहा था। 'इन्किलाब' नामक मासिक पत्र में एक लेख लिख कर श्री० अच्युत पटवर्धन ने पहले से ही जापानी आक्रमण की सूचना दे दी थी। इस 'इन्किलाब' मासिक के सम्पादक-गण श्रीमती अरुणा और डॉ० राममनोहर लोहिया थे। श्री. अच्युत पट-वर्धन ने लिखा था कि—'हम में से साधारण से साधारण बुद्धि वाला व्यक्ति

भी यह कह सकता है कि इतने दिनों से हमारे जीवन और वस्तुओं पर जो ब्रिटिश अंकुश था वह धीरे-धीरे हटता जा रहा है, अब ब्रिटेन की ग़ैरज़िम्मेदार सरकार के दिन समाप्त होने को हैं।

बंगाल और अन्य प्रांतों में आंदोलन का असर

१६४२ के जन आंदोलन में जनता ने बंगाल तथा दूसरे प्रांतों में कैसे और क्या क्या किया, और क्या तकलीफें उठाई इन सब बातों का विवरण अभी तक सरकारी प्रतिबंधोंके कारण मालूम न हो सका है। फिर ही अभी अभी जब गांधीजी बंगाल के दौरे पर गये थे तब उनके साथ वाले एक व्यक्ति ने वहां की हीनदशा का कुछ वर्णन अपने परिभ्रमण में किया है। वे लिखेत हैं कि—

हुगली से निकलनेके बाद गांधीजी के साथ हम सब डायमंडहार्बर पहुँचे। गांधीजीने वहाँकी शांतिका पूरा उपभोग किया। जब डायमंड-हार्बरमें उतरे तब उन्होंने अभ्यासानुसार दोपहरका नियमित विश्राम किया। नदीका किनारा, लोगोंकी भीड़से ठसाठस भर गया था। वे सब लोग आसपासके गाँवोंसे आये थे, और गांधीजीका भाषण सुननेके लिए सभाके मैदानमें इकट्ठे हो गये। वहीं सांध्य-प्रार्थना करनेके बाद हम लोगोंने डायमंड-हार्बर छोड़ा, और नदीके उस पार जा पहुँचे; उसके बाद हम छोटे छोटे बोटोंमें बैठे, जो हमें हमारी महिषादलकी मंजिलको पहुँचानेवाले थे। नदी और नहरके किनारोंपर लोगोंके झुण्डके झुण्ड खड़े थे।

किन्तु हमें इस प्रदेशमें कहीं भी आवाज़ या नारे सुनाई नहीं दिये; सान्ध्य-प्रार्थनामें प्रति-दिन आस-पासके २५-३० मीलके क्षेत्रसे लोग आ आ कर ५०-६० हज़ारकी संख्यामें एकत्रित होते थे, फिर भी हमने यहाँ कहीं भी अशान्ति नहीं देखी; इससे यह सिद्ध होता था कि स्थानीय नेतागण जनतापर कितना अधिकार रखते थे। जहाँ ऐसा न होकर लोग अपनी मर्जी के मुताबिक हो-हल्ला करें वहाँ दिखानेके लिए भी वे नेताओंके हुक्म नहीं मानते। यहाँके प्रभावशाली कार्यकर्तागण कांग्रेसके सिद्धान्तोंका भली-भांति प्रचार करते थे, और इसीलिए यहाँकी जनता उनके अधिकारमें थी। हमसे

कहा गया था कि यहाँके नेतागण शान्त कार्यकर्ता होनेके कारण, बाहरकी दुनियामें प्रसिद्ध न थे। वे कार्यकर्तागण विज्ञापन या प्रसिद्धिसे दूर रहना चाहते थे। मिदनापुर यदि इस दृष्टिसे सर्वोत्तम गिना जाता तो यह सब उनके कार्योंका ही परिणाम था।

१९४२में यदि ब्रिटिश सेना पीछे हट जाय, और जापानियोंसे मुक़ाबला करना पड़े तो उन्होंने पहिलेसे ही इसके लिए अपना विस्तृत कार्यक्रम बना लिया था; किन्तु सरकारने ज़बर्दस्ती इन लोगोंके पाससे मोटर-लारियाँ, बोटें और सायकलें छीन ली, जिससे ये वाहन जापानियोंके हाथोंमें न पड़ें। इस एकाएक काररवाईसे ऐसा मालूम होता था कि जापानी अब किसी भी क्षण यहाँ आ सकते हैं। इतना ही नहीं यहाँके सरकारी व्यवस्थापक भी जनताको उनके भाग्यपर छोड़कर भाग खड़े हुए थे। इसलिए जनताने स्वयं अपनी रक्षाके लिए तैयारियाँ प्रारम्भ कीं: उसने एक महीनेकी अवधिमें ३००० के करीब स्वयंसेवक तैयार किये, कुछ ही दिनोंमें यह संख्या बढ़कर ५००० हुई जिसमें कई महिलायें भी थीं।

तब रुपये-पैसे, चाँवल और दाल इकट्ठे किये गये; लोगोंको निर्भय बनने का प्रोत्साहन दिया गया: और उन्हें बताया गया कि अत्याचारके वक्त वे अपने रक्षा-साधनोंपर निर्भर करें; इस तरह पूरे विभागको व्यवस्थापूर्वक तालीम दी गई। ये लोग बहुत ही अनुशासन-बद्ध और शान्त थे; क्या यह बात आश्चर्यजनक नहीं है?

वे नेतागण सिर्फ भाषण करनेवाले ही नहीं हैं, चुनावके वक्त उनका समय इधर-उधर प्रवासमें ही गुजरता है और वक्त बीत जानेपर वे फिर जनतामेंसे अदृष्य हो जाते हैं। उन्होंने जनता के साथ जीकर कठिनसे कठिन काम किये थे। अव्यवस्था, लूट, और अत्याचारोंने इस भूमिको छिन्न-भिन्न कर दिया था। बहुतसे लोग बे घर-बारके हो गये थे; और यह जो कुछ अधूरा था उसे पूरा करनेके लिए अकालका राक्षस आ पहुँचा और बहुतसे व्यक्ति भूख और तक़लीफोंसे तड़प-तड़प कर मर गये। थोड़ेसे कांग्रेसी कार्यकर्तागण जो जेलोंसे बाहर रह गये थे, के साथ यहाँके बहुतसे परिचितोंने इकट्ठे होकर दुःखियोंकी

मदद करना प्रारम्भ किया, और इसी सिलसिलेमें एक 'रक्षा-समिति' बनाई । इस 'रक्षा-समिति' के अन्तर्गत ६ रक्षा-शिविर, ६ सस्ते अनाजकी दूकानें, १५ शारीरिक रक्षा और चिकित्सा केन्द्र, ४ मुफ़्त दूधकी दूकानें १२ खेतोंके लिए बीज बाँटनेके केन्द्र, ४ चाँवल की सफ़ाईकी कलें, १ तेल निकालनेका केन्द्र, और तीन खादी-केंद्र खोले गये थे । इन केन्द्रोंके द्वारा जनतामें चाँवल, कपड़ा, दवाइयाँ, और दूसरी आवश्यक वस्तुओंका वितरण किया गया जिसकी कीमतका अन्दाज़ लगभग १,५८०००) तक किया जाता है ।

सरकारकी लापरवाही और अव्यवस्थाको मिटानेके लिए हमारे नेताओं ने जिस साहस, अथक परिश्रम और अपूर्व शक्तिसे लोगोंका संगठन किया वह कहानी राष्ट्र-प्रेमके रंगोंसे रँगी हुई है । रूसने जिस तरह जर्मन-सितमगरोंका मुकाबला किया हम उसकी मुक्तकण्ठसे प्रशंसा करते हैं; किन्तु संकट के समय इस प्रान्तके लोगोंने जो कुछ भी किया वह उससे किसी भी हालत में कम नहीं है । उन्होंने सच्चे अर्थोंमें राष्ट्रीय सरकारकी स्थापना की थी; और एक सर्वोच्च-समिति भी बनाई थी जिसने काँग्रेसके शासनमें रहकर कार्य किये । एक सर्वोच्च अधिकारी भी चुना गया जिसकी मददके लिए दूसरे मन्त्रियोंको नियुक्त किया गया, जिनका काम कानून, व्यवस्था, जन-स्वास्थ्य, शिक्षा, न्याय, खेती और उपचारके सब काम सम्हालना था; उनके ही आधीन अपना पोस्ट-विभाग भी था । तोड़फोड़ करनेवालों, चोरों और लुटेरोंको पकड़ा जाता था और कानूनके अनुसार उनका न्याय किया जाता था ।

इसके साथ ही साथ स्वयंसेवकोंकी एक सेना बनाई गई थी, जिसमें एक सर्वोच्च अफ़सर और एक सेनापतिकी नियुक्ति की गई । सेनामें भी बहुत से विभाग थे, जैसे युद्ध-विभाग, पुलिस-विभाग वग़ैरह । एक एम्ब्यूलेंस भी बनाई गई, जिसके अन्तर्गत कुछ अनुभवी डॉक्टर, कम्पाउण्डर , मज़दूर और नर्सें थीं ।

इस संस्थाको एक वक्तव्यके द्वारा श्रद्धाञ्जलि देते हुए सरकारने बताया है कि—"१९४२-४३ के अन्तर्गत जो तोड़ फोड़की घटनाएँ हुईं उनकी बहुत-सी बातें जानने लायक़ हैं । बंगाल प्रान्तके मिदनापुरमें डाकुओं और

लुटेरोंको बहुत होशियारीसे पकड़ा गया था। उनके बारेमें जनताको विविधि सूचनाएँ देनेका ढंग निकाला गया; और उपर्युक्त तरीकोंसे उन लुटेरोंकी कार्यवाहियोंको गुप्त रूपसे मालूम किया जाता था। लुटेरोंके मुक़ाबलेमें जो दस्ते जाते थे उनके साथ हमेशा डाक्टरों और नर्सोंकी टुकड़ी भी जाती थी; इस प्रकार वहाँका गुप्त-पुलीस (C. I. D.) विभाग महत्त्वपूर्ण कार्य करता था।

इस राष्ट्रीय सरकारने १७ दिसम्बर १९४२ से ८ अगस्त १९४४ तक राज्य किया। महात्मा गाँधी द्वारा २९ जुलाई और ६ अगस्त १९४४ को जो वक्तव्य नेताओंको शरण जानेके लिए अखबारोंमें प्रकाशित किया गया था उसके फलस्वरूप ८ वीं अगस्त को इस राष्ट्रीय सरकारका काम बन्द कर दिया गया था। इस अर्सेमें दुश्मनने सरकारी विभागका सन्देह करके बार बार इस राष्ट्रीय सरकारपर हमला किया जिसमे वह जो कुछ भी व्यवस्था करती थी वह नष्ट हो जाती थी। इन सब घटनाओंका विवरण जब गाँधीजीने सुना तब उन्हें बहुत दुःख हुआ, उन्होंने कहा हमारी राष्ट्रीय सरकारको दूसरोंकी तरह न होकर अहिंसक ही होना चाहिए।

बंगालके अन्य स्थानोंको छोड़कर हमने इसी प्रदेशमें आना ज्यादा पसन्द क्यों किया? इसका जवाब यही है कि इसी प्रदेशने सबसे अधिक पुलिस और सैनिकोंके जुल्म, आग, हमलों और अकालकी भयंकर यातनाएँ सहन की हैं: इन लोगोंके बारेमें महात्माजीको बहुत दुःख हुआ था, और खास तौरपर यहाँकी जनताको आश्वासन देनेके लिए ही वे यहाँ आये थे। हमारी ठहरने अवधिमें हम आसपासके गाँवोंमें भी घूमे थे; बहुतसे गाँवोंपर तो पुलिस द्वारा बार-बार हमले किये गये थे; वहाँके लोगोंने भयंकर अत्याचारोंका सामना किया था। किन्तु इन लोगोंने उन जुल्मोंके सामने सिर झुकानेके बदले आत्मश्रद्धा और हिम्मतसे काम लिया; उस वक्त उनमें विदेशी सरकारको जड़से उखाड़ फेंकनेकी नवीन भावना जागृत हुई थी। उस वक्त वे खुले मन और खुले मैदानके वासी थे, किसीकी भी हुकूमत उस वक्त वे सहन न कर सकते थे।

जहाँ जहाँ हम गये, हमने पुलिसके द्वारा जलाए हुए घर, गोलीसे बिंधे हुए लड़के लड़की, विधवा स्त्रियां और पुलिसको मदद देनेसे इन्कार करनेपर जबर्दस्ती ठूँसे हुए क़ैदी, ये ही सब देखे। फिर भी हमें यह बात अनुभव हुए बिना न रही कि उनके मुखपर अपने किये हुए कार्योंका गौरव था।

हमारे माहिषादल पहुँचनेके बाद दूसरे दिन, मैं और मेरे एक मित्र खेतोंमें घूमने गये; हमें जाते जाते रास्तेमें मनुष्यकी एक खोपड़ी दिखाई दी; उसने हमें यह सुधि दिलाई कि उस वक्त वहाँके लोगोंने क्या कुछ सहन किया था। जहाँ गये वहाँ, और जब तब पुलिसके जुल्मों, अव्यवस्था और अकालकी बातें थीं। उन्होंने ४२ में जो कुछ किया था, वह हमारे पूछनेपर उन्हें किसी भीषण स्वप्नकी तरह याद आ जाता था; उसके सिवा उनके लिये कुछ सोचने या बातें करनेका विषय ही नहीं था। हमने वहाँ जो कुछ सुना और देखा था, वह हमें तब तक याद रहेगा जबतक राष्ट्रको नवजीवन नहीं मिल जाता; और उन बातोंकी यादगारकी तरह वह खोपड़ी भी हमारे साथ ही है।

× × × ×

रविवार ता० ३० को हमने महिषादल छोड़ा और कोन्टईके लिए रवाना हुए। हम स्टीमरमें प्रवास कर रहे थे; नदीके दोनों किनारोंपर लोगोंके झुण्डके झुण्ड, गांधीजीके दर्शनके लिये खड़े थे। उस वक्त महात्माजी आये हुए पत्रोंको पढ़ पढ़कर उनका जवाब लिखवा रहे थे। लोगोंने नदीके एक ओरसे दूसरी ओर तक रस्सियाँ बाँधी थीं और उन्हें पतों, फूलों और राष्ट्रध्वजाओंसे सजाया था। नदी किनारेके एक गाँवके निवासियोंने तो गांधीजीको स्टीमरसे उतारनेके लिये, एक ऊँचा चबूतरा-सा बनाया था और एक सभामंडप भी, जिसमें वे भाषण कर सकें। जब वहाँ पहुँचे तो लोगोंकी भीड़ हमारी प्रतीक्षा करती हुई बैठी थी। गांधीजीके कार्यक्रममें पहलेसे यहाँ भाषण करनेकी बात न थी; किन्तु जब उन्हें यह मालूम हुआ कि लोगोंने उनके भाषणके लिये पहलेसे ही

तैयारी कर रखी है तो उन्हें लाचार होकर लोकमतकी बात माननी पड़ी।

दोपहरको करीब दो बजे हम लोग एरिच पहुँचे; और वहांसे काकरा नामक खाड़ी तक पहुँचनेके लिए, जो वहाँसे करीब चौदह मील दूर थी, मोटर में जा बैठे! यद्यपि वे लोग यह न जानते थे कि गाँधीजी वहाँ ठहरेंगे या नहीं फिरभी उन्होंने तीस चालीस हजार आदमियोंके बैठने लायक जगह तार खींच कर बना दी थी, और एक छप्परसे ढका हुआ मंच भी गाँधीजीके भाषण करने के लिए बना दिया था! उन्होंने हम लोगोंके लिए छोटी छोटी झोपड़ियां भी बाँध दी थीं जहाँ हमें स्वादिष्ट भोजन खिलाया गया; इतना ही नहीं उन्होंने यूनियन बोर्डकी मददसे चार मील लम्बा एक मोटर-मार्गभी तैयार कर दिया था। गाँधीजीकी सहूलियतके लिए उन लोगोंने जो जो परिश्रम उठाए और जो प्रेम-पूर्ण सत्कार किया, उससे हमें मालूम हो रहा था कि महात्माजीके लिए उनके हृदयमें कितना गहरा प्रेम है।

बहुतसे समाचार-पत्रोंके प्रतिनिधियोंने, जो हमारे साथ काकरा न आकर महिषादलसे सीधे कोन्टाई पहुँच गये थे लोगोंको यह बताया था कि पहले जो रास्ता निश्चित किया था, उसी मार्गसे महात्माजी जाएँगे; यह समझकर उस मार्गपर हजारों लोग इकट्ठे हुए और वहीं रास्तेमें रात गुजारी।

जब उन दर्शनातुरोंको यह खबर मिली कि गाँधीजी तो दूसरे रास्तेसे चले गये, तो वे बेचारे निराश होकर शांतिपूर्वक अपने घर चले गये। भक्तको चाहे जितनी मुश्किलोंका सामना करना पड़े किन्तु उससे उसकी भक्तिका आवेग नहीं रुकता; कई बार यह भक्ति-धारा विचित्र ही तरहसे बहती है।

उदाहरणके तौर पर जब हम खाड़ीके रास्तेसे वापस कलकत्ते जा रहे थे तब शीतकी पर्वाह किये बिना दो तीन स्त्रियाँ कमर तक ठण्डे पानीमें खड़ी थीं उनके हाथ गांधीजीको देखकर भावपूर्वक जुड़े हुए थे।

काकरासे मोटरके द्वारा हम लोग शामको छः बजे कोन्टाई पहुँचे; वहाँ हमें दो काँग्रेस नेताओंकी मेहमानगीरी चखनी पड़ी; वे स्वयंसेवकोंकी मददसे हमारी सहूलियतके लिए पूरा इंतिजाम कर रहे थे। हमारे बंगाल प्रवासमें यहाँ की तरह दूसरी जगहोंपर भी उन लोगोंने जिस श्रद्धा और सत्कारका परिचय

दिया वह अपूर्व था। मिदनापुर जिलेके कोन्टाई सब-डिव्हीजनका प्रमुख नगर कोन्टाई है। यह जिला बंगालके नैऋत्य भागमें है, जिसका एक भाग हुगली नदीके किनारेंपर बसा हुआ है, और शेष भाग बंगालकी खाड़ीके किनारे है। इस प्रदेशमें नहरोंका जाल-सा बिछा हुआ है; और उसका उपयोग खास रास्तेके तौर पर होता है।

१६४२ के अगस्त आन्दोलनके समय नेताओंकी गिरफ़्तारीके बाद, तो ऐसा मालूम हुआ कि मानो इस आन्दोलनका कुछ परिणाम ही नहीं निकला। किन्तु यह शांति तो वह शांति थी, जो तूफ़ानके पहले होती है। अन्तमें सितम्बरकी २६ तारीख़को एकाएक अशांति फूट पड़ी। पुलिस-चौकियों पोस्ट आफिसों, स्कूलों और सरकारी मकानोंमें आग लगानेकी प्रवृत्तियाँ शुरू हुईं; साथ ही साथ टेलीफोनके तार काटने, सरकारी चीज़ोंको नष्ट करने इत्यादि का आन्दोलन भी एकाएक चल पड़ा। तब सरकारी अधिकारी भी अपनी सुध खो बैठे और पुलिस तथा सैनिकोंको उनकी मर्ज़ीके मुताबिक़ गाँव जलाने, लूट खसौट करने, स्त्रियोंपर अत्याचार करने और अन्धाधुन्ध गोलियाँ चलाने की सम्मति दी: और इस तरह लोग उस तूफ़ानके चक्करमें पड़कर दोनों ओरसे दुखी हुए।

एक बार रातको भोजन करके, मिदनापुर कांग्रेस कमेटीके उप मंत्री श्री त्रिलोकनाथ प्रधानने, जो वकील हैं, मुझे जो कुछ कहा वह मैं यहाँ बताता हूँ।

वे अपने भाई स्त्रीबच्चोंके साथ पासके ही एक गाँवमें रहते थे; उनके परिवारमें २८ प्राणी थे। २९ सितम्बरको जो आन्दोलन शुरू हुआ उसके दमनके लिए फौजके लोगोंको वहाँ बुलाया गया; उन्हें अलग अलग जगहों पर नियुक्त करके, उनसे कहा गया कि वे आसपासके गाँवोंमें आतंक फैलाएँ। सुबह आठ बजे वे अपने स्थानोंसे निकलते और लूट खसौट मचाते हुए, झोंपड़ोंको जलाते और स्त्रियों पर अत्याचार करते हुए शामको चार बजे वापस अपनी जगहपर लौटते थे। यह सब अक्टूबर के पहले सप्ताहसे शुरू हुआ, उनकी इस कार्रवाईसे लोग इतने भयभीत हो गये थे कि दूसरे सप्ताह

में तो अधिकांश ग्रामवासी गाँव छोड़ छोड़कर भागने लगे। उनके कुटुम्ब में से भी दो तीन आदमियोंको छोड़कर शेष सभी व्यक्ति गाँव छोड़कर चले गये। ये लोग समुद्र किनारेसे कुछ दूर मैदानमें जाकर रहने लगे; वहाँ न तो घर थे, न छप्पर ही, इसलिए उन सबोंको घरबार छोड़कर खुले आकाशके नीचे रहना पड़ा; इनमें देखभाल करनेवाले पुरुषोंको छोड़कर बाकी सब स्त्रियाँ और बच्चे ही थे।

१६ अक्टूबरको सुबह ११ बजे समुद्रमें एक भयंकर ज्वार आया, और उसकी पकड़में आकर बहुत सी चीजें उसीमें समा गईं; कई जगह तो ये लहरें चालीस फीट ऊँची थीं, और काली दीवालकी तरह ऐसी भयंकर मालूम होती थी कि उस दृष्यकी भीषणताको देखकर ही बहुतसे दुर्बल हृदय बेहोश हो गये! समुद्रके नजदीक जो लोग थे, वे सब मौतके मुँहमें चले गये; कुछ को छोड़कर गाँवके सभी ढोर और मनुष्य समुद्रके पेटमें समा गये।

उनकी वृद्ध चाचीको चटाईपर बैठाये ही पाँच मील तक घीसकर ले जाना पड़ा; और उनकी बारह सालकी लड़की और नौ सालके लड़केके साथ घरके दूसरे व्यक्ति झाड़ोंपर चढ़ गये। जो कुछ छोटी मोटी फूसकी झोपड़ियाँ थीं वे ज्वारके आवेगमें क़रीब क़रीब टूट चुकी थीं। ये सब बारह घण्टे तक झाड़की टहनियोंसे ही चिपके रहे, तब कहीं जाकर दूसरे रोज नीचे उतर पाये। उनके गाँवके भी सभी मकान नष्ट हो चुके थे, और कुटुम्बमें वे और उनकी पुत्रीके साथ पाँच ही व्यक्ति बच पाये थे।

उस वक्त मोटर लारियोंकी भी बड़ी कठिनाई थी; जापानके डरके कारण सरकारने एकको छोड़कर बाकी सब लारियां बाहर भेज दी थीं; सिर्फ एक डाककी लारी थी, जिसमें हुक़्मके बगैर कोई भी यात्रा नहीं कर सकता था और गैर सरकारी व्यक्तियोंके लिए उसमें बैठनेकी आज्ञा प्राप्त करना असंभव था। उस वक्त प्रांतीय सरकारने अनाज और मिट्टीके तेलका जहाज़ भेजनेकी व्यवस्था की थी, किन्तु सब डिव्हीज़नल अफ़सरने अनाज वगैरहके जहाज़ोंको उस क्षेत्रमें ले जानेका निषेध कर दिया। वे, जबतक क्रांतिकारी लोग अपने आन्दोलनोके लिए पछता कर क्षमा न माँग लें तब

तक उन्हें भूखों मारना चाहते थे; वे उन्हें ज़रा भी व्यक्तिगत या सरकारी मदद करनेके खिलाफ़ थे। अन्तमें सचमुच ही मददका समय आया तो उन्होंने ख़ास ख़ास कर्मचारियोंको यह सूचनाएँ दी कि दिनमें तो उन्हें मदद करें और रातमें छापा मार कर उसे वापस लूट लें!

यह नीति कुछ ऐसी विचित्र थी कि स्वयं स्पेशल अफ़सरने इसका विरोध किया। तब श्री० त्रिलोकनाथ खुद जाकर अर्थमन्त्री श्री० श्यामाप्रसाद मुखर्जीसे मिले, उन्हें सब बातें बताईं और उन्हें तथा स्थानीय स्वराज्य विभागके मन्त्री श्री० सन्तोषकुमार वसुको कोन्टईमें ले आये। उनके ज़रिये उन्होंने वायसरायके पास एक विशेष वक्तव्य भेजा। अन्तमें उनके प्रयत्न सफल हुए; उन लोगोंको गिरफ्तार किया गया, और मंत्रियोंके बिदा हो जानेके बाद डिस्ट्रिक्ट मॅजिस्ट्रेटने उन्हें जेलमें बंद किया।

हम जंबुसन गाँवको देखनेके लिये गये; यह गाँव कोन्टईसे दो मीलसे भी कम पड़ता है। यहाँकी १७६ की बस्तीमेंसे ८२ व्यक्ति समुद्रके ज्वारमें, और ५१ महामारी और अकालके कारण मौतके मुँहमें समा गये। ४४ कुटुम्बोंमेंसे १८ कुटुम्ब साफ़ हो गये और प्राकृतिक और मानुषी कोपके कारण सभी घर-बार नष्ट हो गये। पहले वहाँ ६ बोटें थीं, किन्तु १६४२ के प्रारम्भमें ही सरकारने उन सबको वहाँसे हटा लिया। एक आदमीने अपनी बोटको कुछ दिन पानीमें डुबी रखकर बचा ली थी, और आन्दोलनके वक्त उसने इस बोटके द्वारा कई जानें बचाईं। कोन्टईकी पहली यात्रामें ही पुलिसने उस बोटको देखा और ज़ब्त कर लिया; जिसके फलस्वरूप फिर अधिक जानें बचाई न जा सकीं। एक सप्ताह तक सारा गाँव पानीके नीचे रहा सब पानी खारा हो जानेके कारण बोटके द्वारा कोन्टईसे पानी लाया जाता था; और अभी भी लोगोंके लिए पीनेका पानी कोन्टईसे ही लाया जाता है। सरकारने ३००० खर्चसे एक ट्यूबवेल डलवाया है, क्योंकि कराट्रॅक्टरने जिस लोहेका उपयोग किया था वह 'गेल्वेनाइज्ड' न होनेसे पानी लाल होता है, जो पिया नहीं जा सकता। जब लोगोंने अपनी मुसीबतकी कहानी कही तब सचमुच उनकी आँखोंसे आँसू बह रहे थे। छः महीनोंसे गाँवमें मलेरियाका भी प्रकोप था।

यह सब हमने लोगोंके मुँहसे सुना है और देखा है। हमसे कहा गया कि—उस वक्त वहाँ वेधशाला और समुद्रविषयक जानकारोंने तूफानकी चेतावनी दे दी थी, किन्तु अफ़सरोंने उस ओर कुछ ध्यान नहीं दिया। तूफ़ानकी शुरुआत १६ अक्टूबरको बड़े सबेरे हुई, और उसके कुछ ही घंटों बाद वह भीषण ज्वार आया। २०० मीलके क्षेत्रफलवाला समुद्र किनारा समुद्रका ही एक हिस्सा बन गया, और उसमें जितने स्त्री-पुरुष, बच्चे और ढोर थे वे सबके सब विलीन हो गये; इस घटनाके सब समाचार क़रीब एक सप्ताह तक दबाये गये थे।

सब-डिवीजनके ८२ संघोंमेंसे ६७ संघोंकी ओरसे जो समाचार प्राप्त हुए उनसे मालूम होता है कि इस प्रदेशमें आन्दोलन और समुद्री तूफानके परिणामस्वरूप ६६३७१ मनुष्योंकी बस्तीमेंसे १२१३६ व्यक्ति मर चुके थे। मुर्दोंके पड़े रहनेसे सब पानी खराब हो गया जिससे हैजा, मलेरिया वग़ैरह बीमारियाँ पैदा हुईं।

मई, जून और जुलाईमें परिस्थिति अत्यधिक गम्भीर थी; उस वक्त आसपासके कई गाँवोंसे भूखे और फटेहाल लोग कोन्टई आये, जिनमें से बहुतसे तो रास्तेमें ही मर गये, क्योंकि उन्हें किसीका ज़रा भी सहारा न मिल सका था, उन्होंने खुली धरती और तख्तोंपर रातें गुजारी थीं। भयंकर वर्षामें वे भीगते हुए आते और कभी कभी रास्तेमें भूखे जंगली भेड़ और कुत्ते उन्हें जीवित ही खा जाते थे। अकालके समयमें बहुतसे लोगोंने कई क़ीमती चीज़ें प्राय: मुफ़्तमें ही बेच डालीं।

यह सब कोन्टईकी संक्षिप्त हक़ीक़त है। गांधीजीकी सांध्य प्रार्थनाके वक्त उनका प्रार्थना स्थल जीवित लाशोंसे पट जाता था; उन लोगोंके दुःखी हृदय मानों कह रहे थे कि जब तक हम लोग वर्तमान सरकारके आधीन रहेंगे, तब तक हम लोगोंकी हालत कदापि नहीं सुधर सकती। उन्हें सल्तनत टिकी रहने देनेके लिए भूखों मरना चाहिए। इस दुःखपूर्ण वातावरणका अंत लानेके लिए एक ही उपाय है वह है उनकी अपनी राष्ट्रीय सरकार। इसलिए गांधीजी रोज़ स्वराज्यकी बातें करते थे, जिससे कि जनता स्वयं अपनी शासक बन सके।

उन्होंने रचनात्मक कार्यक्रमके द्वारा जनताको अनुशासन युक्त और शक्तिशाली बननेकी बात बताई।

× × ×

चितगाँगके बारेमें थोड़ा बहुत भी लिखे बिना हम यह नहीं कह सकते कि हमने बंगालमें जाकर क्या देखा और क्या सुना? यद्यपि हम वहाँ नहीं गये किन्तु वहाँकी मंडलीने गांधीजीसे मुलाकातकी और उन्हें बताया कि १९४२ और उसके बादके आन्दोलनके वक्त क्या क्या हुआ? चितगांग, युद्ध प्रदेश होनेके कारण, वहाँके समाचारों पर सख्त प्रतिबन्ध था, वे किसी भी तरह बाहर नहीं जा सकते थे।

चितगाँग बंगालके सुदूर पूर्वकी ओर बर्माकी सीमासे लगा हुआ है उसके पूर्व और दक्षिणकी ओर ऊँचे ऊँचे पर्वत हैं, जो कि उसे बर्मासे अलग करते हैं।

चितगांगकी पश्चिम और दक्षिण दिशाकी ओर समुद्र है, सिर्फ उत्तर दिशाकी जमीनकी ही वजहसे वहाँका सम्बन्ध शेष भारतसे है जहाँ कि रेलके मार्ग बना हुआ है। वहाँकी प्राकृतिक रचना ऐसी है जिससे वह बर्मा और भारत दोनोंसे मिला हुआ है। अभी अभी जो युद्ध समाप्त हुआ उसमें चितगांगका महत्वपूर्ण स्थान था। यह प्रदेश पहाडियों और जंगलोंसे घिरा होनेके कारण यहाँ इतना अनाज नहीं होता कि उस प्रदेशको काफ़ी हो। युद्ध-पूर्वके समय वहाँके निवासी बर्माके चाँवल और बिहार वगैरहकी दाल पर निर्भर करते थे। वहाँ जो अनाज पैदा हो सकता था वह प्रकृति पर निर्भर था क्योंकि वहाँ नहर की पद्धति नहीं है। इसलिए वे किसान जिनके पास ज़मीन नहीं थी, मजदूरी करनेके लिए बर्मा चले गये और वहाँ अपना जीवन निर्वाह करने लगे। बहुतसे व्यापारी और सरकारी नौकर वर्षमें ख़ास मौसमके वक्त बर्मामें रहते और बाकी समय चितगाँगमें गुज़ारते थे।

इस तरह ऐसे कई सबब थे जिससे कि चितगांवके निवासियोंका सम्बन्ध अधिकतर वर्मासे ही था, और उसे ही वे अपना देश या घर मानते थे।

१९३० के सविनय अवज्ञा आन्दोलनके वक्त चितगांवमें जो सशस्त्र प्रयोग हुआ था तब से वहाँके निवासी सरकारकी नजरोंमें खटक रहे थे। यह शहर

सरकारकी दृष्टिमें बंगालका प्रमुख क्रांतिकारी शहर गिना जाने लगा; उस आन्दोलनके वक्त बहुतसे युवकोंने अपने प्राण गँवाए और बहुतोंको जेलमें भर दिया गया।

इसके बाद पुलिसने यहाँका सम्बन्ध शेष भारतसे बिलकुल तोड़ दिया और जो सत्याग्रह शेष भारतमें होते रहे उनका पर्याप्त प्रभाव इस देश पर न पड़ सका।

१६४१ के अन्तमें जापानियोंने बमवर्षा करके रंगूनको तहस नहस कर दिया; चितगोंगके निवासी जो रंगून या बर्माके दूसरे प्रदेशोंमें थे उन्हें उस वक्त भागकर जंगलों या पहाड़ियोंकी शरण लेनी पड़ी। उनमेंसे हजारों तो भूख और प्राकृतिक प्रकोपसे मर गये। कुछ समय तक तो आग बोटोंने रंगूनके मुसाफिरोंको भारत पहुँचाया किन्तु जैसे ही उनका आगमन बंद हुआ तो सिर्फ चितगांव ही नहीं भारतके अन्य प्रदेशोंके निवासी भी भाग भाग कर जंगली मार्गोंकी शरण लेने लगे। वे कहाँ जा रहे थे और क्या कर रहे थे यह उस समय वे खुद ही नहीं जानते थे; वे तो सिर्फ यही जानते थे कि उन्हें किसी तरह भारत पहुँचना है।

उस तूफानमें सब समान थे; जो लोग किसी दिन लखपति थे वे उस समय चीजें उठा उठाकर नंगे पैरों बीमारी और तक़लीफ़ें सहते हुए भागे जा रहे थे उनमेंसे बहुतसे तो इतने दुर्बल हो गये कि मौतसे बचनेका उनके पास कोई साधन ही न था, जगह जगह रास्तेमें उनके मुर्दे दुतकारे हुए मनुष्योंकी तरह पड़े थे।

वह बर्मा, जहाँसे चितगाँगके निवासियोंका मुख्य भोजन चाँवल आता था, एकाएक सम्बन्ध टूट गया। अब चितगाँगकी थोड़ीसी उपजपर ही वहाँके लाखों निवासियोंका जीवन निर्भर था जिससे परिस्थिति अत्यन्त भीषण हो गई। और उसकी भीषणताको बढ़ानेके लिए युद्ध मोर्चेके सैनिकोंकी छावनी भी वहीं आगई थी, जिनका उदर पोषण भी उसी अनाज पर निर्भर था। बर्मासे भागकर आये हुए लोग अपने साथ कई बातें भी लाते थे, जिनमें उनपर गुजरी हुई विपत्तियों, बम बर्षासे घरोंके नष्ट होनेकी, हजारों आदमियोंकी मौत की, लूट खसौट और स्त्रियोंपर किये गये बलात्कारोंकी,

जीवन और जीनेके साधनोंकी रक्षा करनेमें असमर्थ छिन्न-भिन्न समाजकी, अंग्रेजोंके कायरतापूर्वक पीछे हटने की, उनकी स्वार्थ नीति और अत्याचारकी प्रवृत्तियों तथा भारतीयोंके प्रति किये गये घोर अनाचारकी लोमहर्षी बातोंका भी समावेश होता था।

उनकी इन आँखों देखी घटनाओंके चितगाँगमें फैलनेसे वहाँ के लोगोंमें सनसनी फैल गई; उन्होंने कल्पनाकी कि यदि जापानियोंने बर्मापर अधिकार करके उनपर भी हमला किया होता तो उनकी क्या स्थिति होती?

यह हो ही रहा था कि सरकारने ता. २१ फरवरी १९४१ को उस प्रदेशके छोटे छोटे गाँवोंको खाली करनेका हुक्म निकाला। उन ग्रामवासियोंके लिए और कहीं भी व्यवस्था न की गई थी, और न उनके जीवन-निर्वाहके लिए किसी तरहका ध्यान दिया गया था, और न इतना समय ही दिया गया कि वे कुछ व्यवस्था कर सकें। वे बाहर भी न निकल पाये थे कि सैनिकों के झुण्ड उनके घरोंमें घुसने लगे। वे बेचारे ग्रामवासी जो नासमझ और जड़ थे, जिनकी कई पीढ़ियोंने वहीं अपना जीवन बिताया था, एकाएक सड़कपर भटकते हुए भिखारी बना दिये गये; उन्हें उनकी भूमिपरसे उखाड़ दिया गया। जो सरकार क्षण-मात्रमें सब कुछ छोड़कर भाग सकती है उससे मददकी आशा भी क्या की जा सकती थी? कई इंजिन सरकारी नौकरोंको भगा ले जानेके लिए तैयार खड़े थे, सरकारकी ओरसे उन लोगोंको किसी भी क्षणमें भाग जानेकी सूचना मिल चुकी थी।

सच्चे समाचारोंको सरकारके द्वारा दबा दिये जानेके कारण, बहुत-सी अफ़वाहें ज्वालाकी तरह फैल रही थीं। कहा जाता था कि कुछ ही दिनोंमें चितगांगपर हमला होगा, और उसपर जापानियों द्वारा अधिकार कर लिया जाएगा। डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेटको सभी अधिकार सौंप दिये गये थे, और समझा जाता था कि चितगांग फौजके हाथमें सौंप दिया जाएगा, और जरूरत पड़ने पर उसे अनधिकृत शहर भी घोषित किया जा सकता है! १९४२ के मार्च और अप्रेल मासमें अधिकारियोंको चितगाँगसे हटा लिया गया; लोगोंपर भीषण आतङ्क छा गया; अब वे किसकी शरणमें जाएँ? सरकारने भी उन्हें कहीं का न रखा था। अगर वे चाहते भी तो कहीं भागकर न

जा सकते थे, क्योंकि सरकारने पहलेसे ही सायकल, गाड़ियाँ, मोटर लारियाँ बसें, नावें वगैरह सभी वाहन वहाँसे बाहर भेज दिये थे।

चितगाँग मुख्यतः नदी-नालोंवाला नगर होनेके कारण नावोंको हटा लेनेसे वहाँके ग्रामवासी तो सचमुच बहुत ही परेशान हो गये थे; अनाजके स्थानपर मछलियाँ पकड़नेके लिए भी नावोंकी ज़रूरत थी।

जब जापानियोंके हमलेका भय सिरपर सवार हो, देशमें बर्मासे आये हुए निराश्रितों और सैनिकोंका भयंकर जमघट जमा हो, खुराक पाना दुर्लभ हो, नोटिस पानेपर तत्क्षण गाँवोंको खाली करना पड़े, सरकार भी भाग जानेका निश्चय कर चुकी हो, और आने जानेके सब साधन छीन लिये गये हों तब यदि लोग विक्षुब्ध और अशान्त हो जायँ तो उसके लिए उन्हें दोष कैसे दिया जा सकता है? उनके लिये तो भाग्यके सब द्वार बन्द हो चुके थे और उसे खोलने या उसमेंसे निकलनेका कोई मार्ग ही न था!

तब १९४२के मध्यमें अकालके आसार दिखाई देने लगे। हमने पहले ही बता दिया है बर्माके एकाएक पतनसे एक लाखसे ज्यादा मनुष्योंके उदर-पोषणका सवाल पैदा हो गया था, और बर्मासे चाँवलका आयात बंद हो जानेसे परिस्थितिकी भीषणता और बढ़ गई थी। उसी वक्त डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेटके हुक्मसे चीतगाँगकी दूसरी चीजें जैसे चाँवल, दाल, शक्कर, तेल वगैरह भी बाहर भेज दिया गया, तब परिस्थितिकी भीषणताका पूछना ही क्या?

ता० १० अप्रैल १९४२के दिन मजिस्ट्रेटने नगरके व्यापारियोंकी एक सभा बुलाई और कहा कि—"दुश्मन आगे बढ़ रहा है, अक्याब उसके अधिकारमें चला गया है। चितगाँगपर किसी भी वक्त हमला हो सकता है; कलकी प्रतीक्षा नहीं की जा सकती, शायद 'कल' आये भी नहीं! अगर आप लोग यहाँसे अनाजको न हटायेंगे तो मैं उसे नष्ट कर दूँगा, क्योंकि मैं उसे दुश्मनके हाथोंमें जाने देना नहीं चाहता।"

इसके बाद सेना-विभागने जितना भी अनाज था सब ऊँचे भावोंमें खरीद लिया। सेनाके कॉन्ट्रेक्टरोंने वहाँके खच्चरोंके खिलानेके लिए शाल (छिलकेवाले चाँवल) खरीद लिए।

एक भारतीय अफसरने भारतीयोंको भूखे मरते देख इसका विरोध किया। कहा जाता है, तब एक अँग्रेजने कहा कि 'खच्चरोंकी जानें ज्यादा कीमती हैं! सरकारको इस वक्त सबसे बड़ी चिंता युद्ध-सामग्रियोंको पूरा करने की है। इस वक्त नागरिकोंकी जरूरतोंपर ध्यान देनेकी और उनके लिए खुराक वगैरह लानेकी व्यवस्था करनेकी सरकारको कोई गरज नहीं।'

रेल्वे, नहर और सड़कोंके बंद हो जानेके कारण लोगोंको किसी भी तरह दिन निकालने थे। खेतोंका भी बहुत-सा हिस्सा सेनाने ले लिया जिससे लोगोंके नुकसान और तकलीफोंमें और वृद्धि हुई; सेनाने जो जमीन ली उसपर मीलों लम्बी नई सड़कें बनाई गईं; और उसमें कमसे कम १०००० एकड़ जमीन, जो चाँवलके खेत थे, पुनः जोतने लायक न रही! उस वक्त चितगाँगकी चाँवलकी जमीनका आठवाँ हिस्सा बिल्कुल बेकार कर दिया गया था। संघर्षको बढ़ानेके लिए, सरकारकी ओरसे जमीनें जब्त करनेकी नीति अमलमें लाई गई, जिसके अनुसार छिलकेवाले चाँवलोंके मौजूदा संग्रहका २/५ वाँ हिस्सा छीन लिया गया। एक ओर जब सैनिक पेट भर भोजन करते थे तो लोग भूखों मर रहे थे; अकालके मारे बेचारे भूखे लोग सैनिकों की जूठनके लिए छावनीके आस-पास इकट्ठे हो जाते थे; वह जूठन भी इतनी होती थी जिससे पाँच लाख आदमियोंका पेट भरा जा सकता था। भारतीय सैनिक तो भूखोंको खानेके लिए देते थे लेकिन उनके गोरे अफ़सरोंने ऐसा हुक्म जारी किया कि बची हुई जूठन वे जमीनमें गाड़ दें, लोगोंको न दें। उन्होंने सैनिकोंको आदेश दिया कि वे नागरिकोंके साथ सम्बन्ध न रखें। इन गोरोंको इस बातका डर था कि लोगोंसे सम्बन्ध रखनेके कारण उनमें असंतोष फैलेगा और सेनामें अशांति पैदा होगी।

यह वह समय था जब कि अकालकी ज्वाला वहाँ भभक उठी, अप्रैल और अगस्त १९४२ में चाँवलका भाव तीन रुपये मन हो गया; और १९४३ तक तो वह बढ़कर ४० रुपये तक पहुँच गया। कई जगह तो लोग पेड़ोंके पत्ते खाते थे। उन्होंमें भोजनके लिए अपनी सब सम्पत्ति पहले ही बेच डाली थी। जिनको गाँवोंके घरोंसे निकाल दिया गया था वे आश्रय खोजते हुए चितगाँगमें आये।

बंगालके अन्य प्रदेशोंकी अपेक्षा चितगांग अकालका पहला शिकार था। मनुष्यकृत अकालका सबसे पहला तजुर्बा भारतमें चितगांगको ही हुआ। सरकारी विज्ञप्तिके अनुसार १६४३ में चितगांगमें भूख और अव्यवस्थाके कारण १०४३२६ से अधिक मृत्यु हुई। उस वक्त प्रवर्तक संघने सेवा की किन्तु इतनी बड़ी विकट परिस्थितिमें एक छोटीसी संस्था क्या कर सकती थी?

अब चितगाँगमें वहाँके निवासियोंकी फिरसे रहनेकी समस्या सबसे बड़ी है; पशुओंका वितरण,हथियार, कलें,बीज और जीवन निर्वाहके अन्य साधनों के साथ चिकित्साकी व्यवस्था, शिक्षाका प्रबन्ध और निराश्रितोंके लिए आसरे की सबसे बड़ी ज़रूरत है। इस विषयमें महात्माजीसे सलाह ली गई; उन्होंने कहा कि नेताओंको सरकारी मददकी राह नहीं देखनी चाहिए, किन्तु उनके पास इन कामोंके लिए जितने साधन प्राप्य हों उनका उपयोग करना चाहिए। ऐसा करनेसे वे जनताकी दशा तो सुधारेंगे ही किन्तु साथ ही साथ अपनी शक्तिको बढ़ाकर व्यवस्था करना सीखेंगे और सच्चे स्वराज्यकी भूमिका तैयार करेंगे।

आसामके अन्तर्गत राधापुर गांवमें, जो गोहाटीसे ६ मील दूर है, मैं गया; मेरे साथ एक वकीलभी थे, वे पहले कभी भी राधापुर नहीं आये थे, और न स्थानीय लोगोंसे उनका कुछ परिचय ही था। हमें यह देखकर आश्चर्य हुआ कि लोगोंके पास उनकी सब ज़रूरी चीजें मौजूद थीं, घरोंके आसपास जो ज़मीन थी उसमें उन्होंने बांस केले, नारियल, नागरवेल, सुपारी, गोभी, मिर्च वगैरह बो रखी थी। प्रत्येक परिवारके पास अपनी गाय बकरियें और अन्य पशु थे; पास ही जो ब्रह्मपुत्र नदी बह रही थी उसमें मछलियाँ भी प्राप्य थीं। मैंने कई गाँववालोंसे बातें की; उनकी बातोंसे मुझे मालूम हुआ कि उन्हें कभी भी खुराक की तंगी न हुई क्यों कि वे अपने यहाँ उत्पन्न होने वाली चीजोंका निर्यात नहीं करते। सिर्फ कुछ ही ऐसी चीजे थीं जिन पर बाहरसे आनेकी आशा रखी जा सकती थी और जो उन्हें युद्धके वक्त न मिल सकी थीं; उनमें खास शक्कर,और मीठा तैल,मिट्टीका तैल और नमक थे। शक्कर और मीठा तैल वे खुद बना सकते थे, क्योंकि वे गन्ने और मूंगफलीकी खेती भी करते थे, पर कुछ दिनोंसे उन्होंने इन चीजोंकी खेती बन्द कर रखी थी। प्रत्येक घरमें

रेशम और सूत बुननेके करघे थे। आसाममें रेशम साधारण चीज़ है, गरीब लोग भी उसे पहनते हैं, क्योंकि वे लोग खुद ही पैदा करते हैं। हाँ उन्हें सूती वस्त्रोंकी कठिनाई होती थी क्योंकि उसमें मीलके सूतकी जरूरत थी, और वह उन्हें बहुत कम मिलता था। अगर वे सूत कातनेकी अपनी पुरानी आदत को कायम रखते तो, यह कठिनाई पैदा ही नहीं होती। गांवमें कोई ज़्यादा धन-वान या अति निर्धन न था और न किसीको आर्थिक कमी या बेकारीका डर ही था। राधापुरमें से एक भी व्यक्ति सेनामें भरती न हुआ था; न कोई गोहाटी में काम करनेके लिए मजदूर बनकर ही गया था। यदि हम लोग अपनी ज़रूरतकी चीजें मेहनत करके ज़मीनसे पैदा कर सकें तो हम दूसरोंकी नौकरी करें ही क्यों? उन लोगोंका यही सिद्धांत था।

ग्रामीणोंको स्वावलम्बी बनेने, लोगोंको शोषण और भुखमरीसे छुटकारा दिलाने और अपने आपके लिए करनेके गांधीजीके सिद्धान्तोंकी रचनाओंको मैंने यहाँ अलग अलग रूपोंमें देखा। मुझसे यह भी कहा गयाकि सारे आसाम प्रांतमें करीब करीब ऐसा ही होता है।

यह गांव क़रीब क़रीब १५० से २०० परिवारोंकी बस्ती थी, जिसमेंसे ५० परिवार मुसलमानोंके थे, किन्तु कभी भी उनका हिन्दू परिवारोंसे झगड़ा नहीं हुआ। जब मैंने उन लोगोंसे इस बारेमें पूछा तो एक मुसलमानने जवाब दिया कि—'हम लोग झगड़ा करें ही किसलिए? आखिर हम सब तो भाई हैं, और एक ही गांवमें इकट्ठे होकर काम करते हैं, इकट्ठे रहते हैं। यह स्पष्ट मालूम होता था कि यह स्थान हिन्दु-मुस्लिम झगड़ेके ज़हरसे मुक्त था, जो ज़हर गोहारी और शिलांग जैसे शहरोंमें फैलाया गया था।

वह वक्त चुनावका था, सब ही मोहल्ले और सार्वजनिक स्थान कांग्रेस और मुस्लिम-लीगके पोष्टरोंसे भरे पड़े थे। उस वक्त यह स्पष्ट सा मालूम होता था कि हिन्दू-मुस्लिम झगड़ेका मूल राजनीतिक मतभेद ही है, जिसमें उन लोगोंका भी हाथ था जो जनमतको बहकाकर सरकारी नौकरियां चाहते थे। किन्तु इन बातोंमें जनता बहुत कम रस लेती थी। आसामके दक्षिणी प्रदेश जिला सिलहटके मेमनसिंह गाँवके मुसलमानोंको बसानेकी जो सरकारी

नीति थी, उससे यह मामला बहुत दिनोंसे बिगड़ता जा रहा था, और उस नीतिका प्रारम्भ संभवतः १९२५ से हुआ था ।

१९३५ में जबसे मुस्लिम-लीगी मंत्रिमंडलकी स्थापना हुई तबसे, वहां पाकिस्तानी स्थापना की प्रवृति बढ़ती जा रही थी । गये चार सालोंमें हज़ारों मुसलमान परिवारोंको सरकारकी मददसे वहां लाया गया था । ब्रिटिश सरकार एक ओर तो हमें एकत्रित होनेको कहती है और दूसरी ओर जान बूझकर धार्मिक वृत्तियोंकी कमजोरीसे लाभ उठाकर झगड़ेका मूल उत्पन्न करती है । यदि कोई सरकारपर यह आक्षेप करे कि उसीके द्वारा हममें मतभेद उत्पन्न किया जाता है: और बाहरी दुनियाको यह बताया जाता है कि यदि हिन्दू-मुसलमान एक हो जायें तो हम भारत छोड़ देंगे । ...क्या यह साम्राज्यवादी कूटनीति नहीं है ? ...यद्यपि भाग्य अनुकूल होनेके कारण वे अब तक बच सके थे फिर भी उन्होंने बहुत सी तकलीफें सहीं थीं ।

जब उन लोगोंने महात्माजीका स्वागत किया, तब उन्होंने जो आश्वासन दिया उससे उनके दुःखी हृदयको सान्त्वना मिली, और निराशाएँ दूर हुईं । उनके लिए यही बहुत कुछ था। महात्माजीने उन्हें कार्यशील बननेकी सलाह दी, और अपने आसपासकी सब बातोंको व्यवस्थित और एकत्रित करनेका आदेश दिया । उन्होंने वहांकी जनताको बताया कि सत्य और अहिंसाका पालन करनेसे सिर्फ स्वराज्य ही नहीं, रामराज्य भी मिलेगा; किन्तु उसके लिए उन्हें कुछ करना होगा । उन्हें निडर और एक होकर यहीं और अभी ही कुछ करना होगा ।...

यही उनका संदेश था, पुराना होते भी नित्य और नया ।

अज्ञातवासकी यात्राएँ

अगस्त-आन्दोलनमें जो जो घटनाएँ घटित हुई, उनसे श्री० अरुणा और उनके सहकारी कार्यकर्त्ता अनभिज्ञ न थे; हर एक प्रान्तकी करुण कहानियाँ उनके हृदयमें शूल उत्पन्न करती थीं। अकालके कारण लोग भूखसे मर रहे थे; स्त्रियों पर अत्याचार हो रहे थे। अगस्त-क्रांतिका प्रादुर्भाव भी ग़रीबी, भुखमरी, महामारी इत्यादिसे ही हुआ था; और यही वह समय था जब अज्ञातवासिनी अरुणाने ब्रिटिश सरकारके विरुद्ध क्रांति उत्पन्न की।

क़रीब साढ़े तीन वर्ष तक अज्ञातवासमें रहकर उन्होंने जो कुछ किया, उसका वर्णन जीवनके विचित्र अनुभवों और रोमांचकारी बातोंसे भरा पड़ा है। उनकी गिरफ्तारीके वारंट निकल चुके थे; कानून और व्यवस्थाके नाम पर सरकारका सी. आय. डी. विभाग उनके पीछे पड़ा था। देशके एक छोरसे दूसरे छोर तक सरकारने अरुणाकी परछाईंके लिए दौड़ दौड़ कर कोशिशें कीं; सरकारकी नज़रमें वह परछाईं देशके प्रत्येक भागमें थी, किन्तु काफ़ी प्रयत्नोंके बाद भी पकड़ी नहीं जा सकी।

वे अज्ञातवासी यहाँसे वहाँ घूमते रहते थे; उनकी आँखोंमें चमक थी। जनताके साथ उनका निकट-सम्पर्क था, वे उन्हें किसी भी जगह और किसी भी वक़्त मिल सकते थे। भारतके लाखों नरनारियोंके हृदयोंमें उनका घर था, फिर भी सरकार उनकी खोजमें आकाश-पाताल एक कर रही थी। हजारों घरोंके द्वार उनके सत्कारके लिए खुले रहते थे। ब्रिटिश सरकारकी पुलिस और क़ानूनके शिकंजेमेंसे छूटकर भागी हुई इस वीरांगनाको आश्रय देनेमें ऐसे घर एक प्रकारके आनन्द और गौरवका अनुभव करते थे। उनका रूप एक ही होनेपर भी विभिन्न व्यक्तियोंको वे अलग अलग रूपमें दिखाई देती थीं। जब उन्हें सचमुच यह मालूम होता कि यह बहुरूपिणी रमणी अरुणा ही थी तब उनके आश्चर्यका पार न रहता। उनके हृदय इस नारी-रत्नका अभिन-

न्दन करते थे। अज्ञातवाससे, बंधनोंकी दुनियासे, वे फिर प्रकाशमें आई हैं, जहाँ उनका जीवन बीता है, और जहाँ उन्होंने आज़ादीके सपने देखे हैं। यह भी हमारे स्वागतका एक प्रकार है। उनके लिए आज नया जीवन और नई राहें प्रतीक्षा कर रही हैं।

सरकारको उनकी दिल्लीकी उपस्थितिका आभास हुआ क्योंकि उस वक्त महिलादलके ज़रिये लगातार बहुतसे 'ग़ैरक़ानूनी' पर्चे निकल रहे थे; उन पर्चोंके द्वारा वे विद्यार्थियोंको नये आन्दोलनके लिए प्रोत्साहन दे रहे थे; किंतु एक ही जगह लगातार बहुत दिनों तक कोई व्यक्ति कैसे छुपा रह सकता है? दिल्लीमें कई सप्ताहोंकी अज्ञातवासकी कहानी अब कुछ कुछ ज्ञात हुई है। बहुतोंका कहना है कि वे बुर्क़ा पहिनकर दिल्लीकी मुख्य सड़कों पर घूमती नज़र आई थीं। किन्तु जब उनके द्वारा उत्पन्न किया हुआ वातावरण जनता में उग्रतम होता गया तब उनकी खोज भी उतनी ही तेज़ीसे होने लगी। कई उच्च अधिकारी तो उन्हें ढूढ़नेके लिए आकाश-पाताल एक कर रहे थे, किन्तु कोई भी उनका पता न पा सका। आख़िरकार एक अधिकारीने अपने अफ़-सरसे कहा—'हम नौ आदमी कई दिनोंसे ढूँढ़ रहे हैं पर कहींसे भी उनके अस्तित्वके चिह्न नहीं पा सके। हम जानते हैं कि वे यहीं है, फिर भी उनका पता चलाना बहुत कठिन है। और हम वहाँ कर भी क्या सकते हैं जब दिल्ली के लाखों आदमी एक होकर उन्हें आश्रय दे रहे हों? हम तो ऐसे कामसे ऊब उठे हैं!'

एक वक्त आष्टी-चिमूरकी घटनाओंके बारेमें, जब देशमें चारों ओरसे श्री० आर. एस. अणे पर उस विषयकी जाँच करनेका दबाव डाला गया, और कुछ महिलाएँ प्रतिनिधिके रूपमें जब उनसे मिलीं तब वे घबरा-कर बोल उठे—'मुझे श्रीमती अरुणाके पास ले चलिए, मैं उन्हें सब कुछ समझा दूँगा!'

किंतु अज्ञातवासका जीवन निरंतर आशंकाओंसे घिरा हुआ था; कल कहाँ डेरा डालना होगा, कहाँ भोजन करना होगा, यह सब पहलेसे ही निश्चित नहीं किया जा सकता था फिर भी तरह तरहके अनुभवोंके बीचसे गुज़र जाने के बाद, अज्ञातवासी व्यक्तियोंको परिस्थितिकी गंभीरताकी अभेद्य समस्याओं

को सुलझानेकी समझ धीरे धीरे आ ही जाती है। दूसरी ओर जेल-जीवनमें कइयोंको सुंदर विचारों पर मनन करनेका अमूल्य अवसर मिल जाता है; कई बार उनके जीवनमें नई प्रतिभाका भी विकास होता है किंतु अज्ञातवासियोंको कभी भी ऐसा अवसर नहीं मिलता; क्योंकि उनके विचार तो सिर्फ़ स्वरक्षा और आन्दोलनकी ओर ही केन्द्रित रहते हैं और समय बीतनेके साथ ही साथ उनके विचारोंमें दृढ़ता और अनुभूति आती रहती है।

दिल्ली ब्रिटिश साम्राज्यका अभेद्य दुर्ग है; श्रीमती अरुणाका स्थान और घर भी दिल्लीमें ही है। ए० आई० सी० सी० की बम्बई बैठकमें 'भारत-छोड़ो' प्रस्तावके पास होनेपर, उनकी गिरफ्तारीका वारण्ट भी बम्बई से ही जारी हुआ था; क्योंकि वे ए० आइ० सी० सी० की बैठकमें शामिल होनेके लिए वहाँ आ गई थीं।

श्री० आसफ अलीको भी महात्माजीके साथ साथ '६ अगस्ट ४२' को सुबह जेलमें ले जाया गया: यह पाँसा एकाएक फेंका गया और इस तरह ब्रिटिश सरकारने देशकी नई उत्तेजित परिस्थितिसे मुकाबला करनेका निर्णय कर लिया था। बहुत दिनों पहिले सर सॅम्युअल होरने पार्लिया-मेंण्टमें, ऐसी ही परिस्थिति उत्पन्न होनेपर कहा था कि–'कुत्ता भी नहीं भौंका !'..

शायद चर्चिल, एमरी, लिनलिथगो और उनके सहकारियोंने सोचा होगा कि फिर पुराने इतिहासका पुनरावर्तन होगा; किन्तु वे यह न जानते थे कि भारतकी जनता सचमुच एक नये इतिहासका सृजन कर रही है।

नेताओंको गिरफ़्तार करके, दूर दूरके पुराने किलोंमें बन्द कर दिया गया। भारतकी सबसे बड़ी जन संस्था काँग्रेस पर प्रतिबन्ध लगाया गया और उसे 'गैरकानूनी' घोषित किया गया। नेताओंके अभावमें उनके आदेशोंके बगैर जनता अपनी मर्जीके मुताबिक कार्यक्रम बनाकर अमल करने लगी; जनताका यह दृढ़ निश्चय था कि ·'·· · ·;·' अब बगैर मुकाबला किये वह आगे न बढ़ने देगी!' उस नाजुक परिस्थितिमें वीरांगना अरुणा और उनके साथियों ने देशकी तात्कालिक स्थितिका नेतृत्व अपने हाथोंमें लिया। 'भारत-छोड़ो' प्रस्तावके समय जो सूत्र गांधीजीने जनताको दिया था, उसी सूत्रको ज्वलन्त

रखनेके लिए उन्होंने जनताको बताया कि प्रत्येक मनुष्य स्वतन्त्र है; स्वतन्त्रता से जीओ, और स्वतन्त्र होकर कार्य करो।' अरुणाने महात्माजीके इस मूल-मंत्रको अपने जीवनमें उतार लिया, उन्होंने ६ अगस्त ४२ के तीन दिन पहिले कहा था कि—'अब हमारे सामने जीवन-मरणका प्रश्न है, हम अब अधिक समय तक इस परिस्थितिमें नहीं रह सकते।' इन्होंने ऐसा ही निर्णय अपने लिए भी कर लिया था। और इससे उनका रास्ता और साफ हो गया। उन्होंने कहा—'आज लोगोंके लिए जीवनमें एक महान् अवसर आया है, जो बार बार नहीं आता; उसका सदुपयोग करना आप लोगोंके हाथमें है; विद्रोहमें आदेशकी जरूरत नहीं; यदि हम इस विद्रोहको सही रास्ते पर न ले गये तो असफलता ही हाथ लगेगी। यद्यपि यह कार्य बहुत मुश्किल है फिर भी उसे सीधा और सरल बनाया जा सकता है क्योंकि इस बार छोटे छोटे षड्यन्त्रों और पुराने झगड़ोंकी जगह एक नया और संयुक्त मोर्चा खड़ा किया जायगा और वही हमारे विद्रोहकी विजयका कारण होगा।'

तबसे वे सचमुच 'वीरांगना' थीं। उनकी आँखें एक अद्भुत ज्योति से चमक उठीं थीं, जिनमेंसे साम्राज्यवादको जला देनेके लिए चिनगारियाँ फूट रहीं थीं। वे सिर्फ कार्योंपर विश्वास करती थीं, योजनाओंपर नहीं। उन्होंने जिस कार्यको हाथमें लिया था उसे पूरा करनेके लिए उनमें जरा भी निर्बलता न थी। उन्होंने जाहिर समाजसे बिदा ली। जिसके लिए उनके हृदय में प्रारम्भसे इतना अधिक प्रेम था उसे छोड़नेपर उन्हें जरा भी तकलीफ न हुई। एक बार दिल्लीकी जिस जनतामें वे सितारेकी तरह चमकती थीं अब वहाँ प्रकट न हो सकेंगी? पहले जिस आधुनिक फैशनेबल वातावरण में, और होटलोंमें घूमती थीं अब वे उनके बिना सूनी हो जाएँगी।

अरुणाने अपने कार्यक्षेत्रको चुन लिया था। उन्होंने स्वतन्त्र होनेका निश्चय कर लिया था; और इसके लिए जो यातनामयी और अपने हाथों बुलाये दुःखोंसे परिपूर्ण जिन्दगी उन्हें बितानी थी उसे खुशीसे स्वीकार कर लिया। उस वक्त जीवनके उस पहलूको देखना उनके लिए खुशीका विषय था। यह एक प्रकारका अद्भुत परिवर्तन था, जिसकी रूपरेखा सुखसे दुखमें जाने

पर, प्रकाशसे अन्धकारमें और सत्से असत्की ओर जानेपर देखी जा सकती थी। अभी तक जनता उन्हें ठीक ठीक पहचानती न थी। यह सच था कि वे बहुत दिनोंसे सार्वजनिक जीवनमें रस लेती थीं, किंतु वह कार्य केवल समाज की परिधि तक ही सीमित था।

यद्यपि असहयोग-आन्दोलनके वक्त उन्होंने जेल-जीवन बिताया; क्योंकि वे उसे एक पवित्र कर्तव्य समझती थीं; तथापि वैसे जीवनमें वे पूरी तरह घुलमिल न गई थीं। तब उन्हें आधुनिकता या फ़ैशनका कुछ मोह था, जिससे वे दिल्लीकी एक प्रतीक मालूम होती थीं।

सबसे पहले उनके व्यक्तित्वका आभास हमें अखिल भारतवर्षीय महिला सम्मेलनमें मिला; उस वक्त जो कुछ कठिन कार्य था वह उन्होंने श्री०सत्यवती देवी पर ही छोड़ दिया था जिसने केवल देश सेवाके लिए अपना सारा जीवन बिता दिया। इन दोनों रमणियोंमें परस्पर प्रगाढ़ प्रेम था। अभी जब अज्ञातवासके बाद अरुणा दिल्ली गईं तो सत्यवतीदेवीके अवसानसे उन्हें घोर दुःख हुआ; उनकी जगह सूनी पड़ी थी। जनताका विश्वास है सत्यवतीदेवी के अवसानसे जो अन्धकार छाया है, अरुणा उसे पुनः प्रकाशित करेंगी। सत्यवतीदेवीने जो सफलता शीघ्र ही पा ली थी, उसे अरुणा भी निकट भविष्यमें पा लेंगी।

वीरांगना अरुणाके अज्ञातवाससे दिल्लीकी 'सोसायटी' की जितनी हानि हुई उतना ही लाभ जनताको हुआ। पन्द्रह वर्ष पहले, जब कॉंग्रेस-कार्यसमितिकी बैठक करांचीमें हुई थी तब अरुणा एक प्रसन्नचित्त और स्वसंतोषी पंछीकी तरह लगती थीं; यद्यपि उस समय भी उनकी बुद्धि और प्रतिभा दूसरोंको प्रभावित करती थीं। उस वक्तकी अरुणासे अभीकी 'भारत छोड़ो' वाली अरुणाकी तुलना नहीं की जा सकती। उस वक्त वे श्री०आसफ-अलीके साथ विवाह-ग्रंथिमें बंधी भी नहीं थीं। उनके विवाहने एक सनसनी सी समाजमें फैला दी, क्योंकि वे दोनों एक जैसे ही 'फैशनेबल' थे; और साथ ही साथ उनमें अन्य नव दम्पत्तियोंकी तरह चंचलता और प्रसन्नता भी थी। श्री० अरुणा भी सब तरहसे अंग्रेजी संस्कारोंसे घिरी हुई थीं और

आसफ़अली भी, थोड़े ही दिन पहले ऑक्सफोर्ड युनिव्हर्सिटीसे लौटे थे, तथा उनकी व्यक्तिगत प्रतिभा भी आकर्षणका कारण थी।

ये दोनों प्रतिभाएँ मंसूरीमें एक दूसरेसे मिलीं, दोनोंमें प्रीतिके अंकुर फूटे, सहवास बढ़ा और आयुकी असमानता भी उनकी प्रीतिमें बाधक न बन सकी। तब इस जोड़ीने विवाह-ग्रंथिमें बँध जानेका निश्चय किया, जो भी उसमें धर्म, समाज, रीतिरिवाज आदिकी रुकावटें थीं। अरुणा उस वक्त बालिग़ न होनेके कारण 'सिविलमॅरेज' भी न कर सकती थीं, क्योंकि उसमें माँ-बापकी सम्मति जरूरत थी। तब एक ही मार्ग था, धार्मिक-रीतिसे विवाह करना। श्री० आसफ अलीको इस नवयुवतीमें जीवन-संगिनीके दर्शन होते थे और अरुणाने भी वहाँ एक नये संसारका स्वप्न देखा। तब उसने इस्लाम-धर्म स्वीकार किया और प्रसिद्ध मौलवी अहमद सैयदने इन दोनोंके जीवन को एक सूत्रसे विवाह-ग्रंथिसे बाँध दिया।

समाजके लिए जो अरुणा सुन्दर, कमनीय, बुद्धिमान और पुष्पकी तरह सुकुमार थी, वह श्री आसफअलीके लिए एक आदर्श धर्म-पत्नी और जीवन-संगिनी थीं। किसी अद्‌भुत क्षणमें उन दोनोंका मिलन हुआ था; प्रारम्भमें जिन दो हृदयोंने एक ही सुर और तालमें कुछ सुना और समझा था, कुछ ही दिनों बाद उन्होंने अपना परिचय पति और पत्नीके रूपमें पाया!

वह एक आदर्श 'जोड़ी' थी। जब जेलसे छूटनेके बाद, बीमारीकी हालत में आसफअली वापस अपने घर पहुँचे तब अरुणाके बिना वह घर उन्हें शून्य और वीरान लगता था; उस वक्तकी ठेस हृदय ही जानता है, शब्द नहीं बता सकते!

श्री० आसफअली तो छूट गये किंतु अरुणा कानूनकी पकड़से दूर दूर भागती थीं; उस वक्त वे भूमिगत थीं। वह हृदय मंथन था, जिसमें वे अपने अन्तरमें स्वयंको ढूँढ़ रहे थे। जीवनमें विश्वास प्रविष्ट हुआ था और अनुभवोंकी परम्पराने उसे दृढ़ किया था। जब उन्होंने दाम्पत्य-जीवनमें प्रवेश किया तब उनका जीवन कुछ ही मनुष्य या एक विशेष समाजके लिए सीमित था, किंतु 'भारत छोड़ो' प्रस्तावकी प्रतीतिने उन्हें मानव-मात्रका बना दिया।

दिल्लीसे उनकी गिरफ्तारीका वारंट निकल चुका था; फिर भी वे जानती थीं कि दिल्लीमें उनके लिए कितने ज़रूरी काम हैं। चारों ओर पुलिस तलाशमें थी, फिर भी वे दिल्लीमें कैसे प्रविष्ट हुई यह एक अभेद्य रहस्य है। वे बम्बई छोड़कर निश्चित समयमें दिल्ली न पहुँच सकीं; रास्तेमें ही एकाएक ग़ायब हो गईं। तब कुछ देरके लिए ग्वालियरमें प्रकट हुईं किन्तु ज़्यादा देर वहाँ भी रुक न सकीं। इस तरह पुलिसको भूल-भुलैयामें पिरोकर वे ब्रिटिश-सरकारकी राजधानीमें जा पहुँची, जहाँ हजारोंसे मिलीं भी, किन्तु उन्हें दिखाई भी न दीं जो उसे गिरफ्तार कर लेना चाहते थे।

सरकारको, उनके दिल्लीकी उपस्थितिका आभास, लगातार निकलनेवाले ग़ैरक़ानूनी पर्चोंसे हो रहा था; वे उन बुलेटिनोंके ज़रिये विद्यार्थियोंको नये आन्दोलनके लिए प्रोत्साहित कर रही थीं, लेकिन एक ही जगह बहुत वक़्त तक कोई फ़रार व्यक्ति कैसा छुपा रह सकता है?

अब उनके दिल्लीके कई सप्ताहोंके गुप्तवासकी कहानी कुछ कुछ मालूम हो सकी है, कई यह कहते थे कि वह बुरखा पहनकर दिल्लीकी खास सड़कोंपर घूमती नज़र आई थीं, किन्तु यह बात सम्भव नहीं मालूम होती! जब उनके द्वारा उत्पन्न किया हुआ आन्दोलन उग्र होने लगा तो उसकी छान-बीन भी उतनी ही तेजीसे होने लगी। बहुतसे उच्च अधिकारी भी उन्हें खोजने के लिए आकाश-पाताल एक कर रहे थे, किंतु किसीको भी उनका पता न मिल सका। आखिर हारकर एक कर्मचारीने अपने अफसरसे ऊबकर कहा—'हम नौ व्यक्ति एक अर्सेसे उन्हें ढूँढ़ रहे हैं, किन्तु हमें कहीं भी उनकी उपस्थितिकी गन्ध न मिल सकी, हम यह जानते हैं कि वे यहीं हैं, फिर भी जहाँ सारी दिल्ली उन्हें आसरा देनेको उत्सुक हो तो वहाँ हम लोग क्या कर सकते हैं...खोजते खोजते हम लोग ऊब उठे हैं।

दूसरे वक़्त जब आष्टी और चिमूरकी घटनाएँ घटीं तब उस मामलेकी जाँचके लिए श्री आर० एस० अणेसे सब लोगोंने अनुरोध किया, और जब महिलाओंका एक डेपुटेशन इस बारेमें उनसे मिला तो वे उनसे घबराकर बोले—'मुझे श्रीमती अरुणाके पास ले चलिये मैं उन्हें सब कुछ समझा दूँगा।

किन्तु अज्ञातवासी जीवन, हमेशा आतङ्कसे घिरा रहता था; कल कहाँ डेरा डालना होगा; कहाँ भोजन करना होगा, यह पहिलेसे निश्चित नहीं किया जा सकता था, फिर भी तरह तरहके तजुर्बों और तकलीफोंके बाद ऐसे लोगों को परिस्थितिकी गम्भीर समस्याओंके निराकरणकी समझ आ जाती है।

दूसरी ओर राजनैतिक क़ैदियोंको, जेलजीवनमें तो कई सुन्दर विचारोंका भी अवसर मिल सकता है, किन्तु अज्ञातवासियोंके जीवनमें ऐसा कोई अवसर नहीं आता, क्योंकि उनका ध्यान हमेशा आन्दोलनके संचालनकी ओर होता है; इसलिए ऐसे व्यक्ति समयके बीतनेके साथ साथ परिस्थितिके अनुसार निर्णय करनेमें अधिक चतुर हो जाते हैं।

अरुणाके बारेमें भी ऐसा ही हुआ। कांग्रेसके 'भारत-छोड़ो' प्रस्तावका रूप और क्षेत्र विस्तृत करनेके लिए इन्होंने जो तक़लीफें उठाई थी उसके लिए वे आज भी गौरवान्वित होती हैं। इस बारेमें जितनी घटनाएँ घटीं उसकी जिम्मेदारी उन्होंने कभी भी क़बूल न की। आलसी व्यक्ति जो राजनैतिक कार्योंमें प्रवृत्त होते हैं उन्हें ज़रा भी नहीं सुहाते। वे आन्दोलनकी ज्वालामें से होकर विना आँचके बाहर आ गई हैं। हाल ही इनके अज्ञातवास समाप्त होनेके बादके भाषणोंमें इनकें स्वभावका आवाज़ निकलता है।

दूसरे नेताओंकी तरह, श्रीमती अरुणा भी यह ख़याल करती हैं कि इन सब नेताओंके छुटकारेके बाद जनताके बलिदानकी कहानी भूली नहीं जानी चाहिए। यदि १९४२ की अगस्त-क्रांतिको यशस्वी बनाना हो तो 'भारत छोड़ो' प्रस्तावको सच करके दिखाना चाहिए। अभी हाल ही इन्होंने जो भाषण दिये हैं उनमेंसे जो भाव निकलता है वह इसे सिद्ध करता है। ब्रिटिश-मालके सम्पूर्ण बहिष्कारसे ही सरकारको पराजित किया जा सकता है। चुनावों और मंत्रिपद ग्रहण करनेके बाद भी बहिष्कारका यह राजनैतिक शस्त्र कायम रहना चाहिए।

श्रीमती अरुणा भारतकी उच्च आत्मा हैं, इनके व्यक्तित्व और जीवनमें घटनेवाले कई प्रसंग ध्यान देने लायक हैं। इनके अज्ञातवासमें इन्होंने जो समय बिताया उसमें हमें इनके नम्र और कोमल नारीहृदयका आभास मिलता है, ऐसी ही एक घटना यहां वर्णन करने योग्य है।

जब सरकारने इनकी गिरफ़तारीके लिए इनकें घरपर नोटिस लगाई तब

वे इधर उधर छुपती फिरती थीं। उस नोटिसमें निश्चित अवधि तक सरकारके आधीन आनेका आदेश दिया गया था। पर उन्होंने उस आदेशकी अवहेलना की, सरकारकी शरणमें न गई, अज्ञातवासिनी ही रहीं। उनके मकान और मोटरपर सरकारने कब्जा कर लिया। उनके विरुद्ध सरकार द्वारा तीन आरोप लगाये गये थे। सरकारने जेलमें दूसरे राजनैतिक कैदियोंके साथ अपने कुछ व्यक्तियोंको रख कर श्रीमती अरुणाका पता लगानेके बहुत से प्रयत्न कर देखे किन्तु सब व्यर्थ हुए। सी. आय. डी. के आदमियोंकी अपेक्षा अरुणा अधिक चपल थीं। जब अरुणाकी माता उनकी बहिन पूर्णिमा बनर्जीके घर मृत्युशय्यापर पड़ी थीं, तब उन्होंने गुप्तचरोंकी आंखोंमें धूल झोंककर अपनी वृद्ध मातासे अन्तिम भेंट की। किन्तु सरकारी गुप्तचर विभागकी देखरेख चौबीसों घंटे उनकी ओर लगी रहनेके कारण, वे अपनी माताके अन्तिम क्षणोंमें उनके पास न रह सकीं। इनके अज्ञातवासकी अवधिमें ही माताका अवसान हुआ था। जब अज्ञातवास छोड़कर वे अपने घर गईं, और वहां माताके कमरेमें पैर रखा तब उनकी पुरानी नौकरानी बसंती दौड़ती हुई आई और उनके पैरोंमें पड़कर कहा कि—'माँ अब न रहीं...'

इन शब्दोंने उनकी माताकी पुरानी स्मृतियोंको याद करा दिया, और तब यह वीरांगना बच्चेकी तरह वसन्तीका हाथ पकड़कर रो पड़ी। अरुणाके साथ साथ उनकी बहन पूर्णिमा और बसन्ती बहुत देर तक आंखोंमें आंसू लिए स्तब्ध खड़ी रहीं।

इनके विवाहित जीवनकी घटना भी इतनी ही आश्चर्य जनक है; जो इसी पुस्तकमें पहले लिखी जा चुकी है। जब यह अपनी बहन पूर्णिमाके यहाँ थीं तब आसफ अलीसे इनकी भेंट हुई और वहीं इन दोनोंमें प्रेम-ग्रंथि बंध गई। यह प्रीति-मिलन परिवारके लोगोंके मत विरुद्ध था, यह लिखने की जरूरत नहीं है। श्री० आसफ अली मुसलमान थे, और अरुणा हिन्दू; इन दोनोंकी आयुमें भी बहुत अन्तर था। फिर भी अरुणा अपने निश्चयसे न डिगीं; उन्होंने विवाहके विरुद्ध किसी भी रायको न माना। जिसके साथ प्रेमकी गांठ बंध गई थी उस पुरुषको ब्याहनेकी क्षमता ही इनमें थी ऐसा ही

नहीं, बल्कि उनका उद्देश्य ऐसे प्रेम-विवाहोंको सफल करना भी था । उनका विवाहित जीवन पूर्णरूपसे सुखी है । उन्होंने खुद कई बार कहा है कि आसफ-अलीकी अपेक्षा अधिक उदार और विशालहृदय पति कोई हो ही नहीं सकता। यह सब सोचने पर यह नहीं मालूम होता कि गांगुली-परिवारने एक नहीं दो नहीं बल्कि तीन तेजस्वी नारी रत्न—अरुणा आसफ अली, पूर्णिमा बॅनर्जी, और नंदिता कृपलानी देशको भेंट किए हैं । और ये तीनों अपनी तरह शिक्षित और अपूर्व हैं ।

विवाहित जीवनने गंभीर और छिछले सब तरहके प्रश्न अरुणाके रास्तेमें ला दिये थे । अरुणाके पति केवल प्रख्यात नेता ही नहीं बल्कि फ़ारसी और उर्दूके प्रकांड विद्वान भी हैं । अरुणा इन दोनोंमें से एक भाषा नहीं जानतीं, इसलिये फ़रीद अन्सारी इन्हें रोज चिढ़ाते थे वे कहते थे—'भाभी तुम्हें उर्दू बोलना कब आएगा ? हमारे आसफ अली तुम पर इतनी बड़ी बड़ी कविताएँ करते हैं कि जिससे स्याहींका अकाल पड़नेकी संभावना है, और तुम तो इन अमरकृतियोंको समझ भी नहीं सकतीं !'

इस रोजकी चिढ़ावनीका जवाब देनेका निश्चय अरुणाने एक दिन सुबह कर लिया । तब तो उनकी प्रेमभरी सासने अपनी पुत्र वधूको कुछ ही समयमें जितना सिखा दिया वह बंबई और देशके दूसरे जंगली भागोंमें रहने वाले मित्रोंका मजाक़ उड़ानेके लिए क़ाफ़ी था ।

१६३० और ३२ के सविनय अवज्ञा आन्दोलनमें अरुणाको जेल जीवन बिताना पड़ा उसी तरह १६४० में भी ; और १६४२ में तो वे जिस तरकीबसे भागी और जेलकी दीवालोंको उन्होंने जिस तरह धोखा दिया, वह अद्भुत था ।

जब श्री० अरुणाको पहले पहल जेल जीवनका अनुभव हुआ तब एक बातने उन्हें बहुत अधिक आश्चर्यचकित कर दिया। जेलका नाम 'लाहौर-फीमेल जेल' था । यह जेल सिर्फ मादा Femaleके लिए ही क्यों थी ? 'स्त्रियों या बहनों की जेल,' यह नाम क्यों नहीं रखा गया? इस प्रश्नने इन्हें गंभीर विचारमें डाल दिया । जेलका मनुष्यसे कुछ भी सम्बन्ध नहीं है; किन्तु नौकरशाहीके विशिष्ठ व्याकरणके गूढ़ प्रश्नोंको कौन सुलझा सका है ?

१९३२ के आन्दोलनके वक्त सज़ाके साथ २००) दंड भी इनपर किया गया था, जुर्माना न भरने पर उन्होंने जो मनोवैज्ञानिक विचित्रता दिखाई उसने पुलिसको भी विस्मयमें डाल दिया। पुलिसने आसफअली के बैंक-बेलेन्सको जब्त किये बग़ैर अरुणाकी बहुतसी बेशक़ीमती साड़ियोंको ज़ब्त कर लिया।

जब वे दिल्लीकी डिस्ट्रिक्ट जेलमें थीं तब राजनैतिक कैदियोंके साथ बहुत निष्ठुर बर्ताव किया गया। इस बातपर क़ैदियों और राजनैतिक बंदियोंने विरोध प्रकट किया; तब अरुणाने अनशन करना शुरू किया और बीमार हो जाने पर भी नहीं तोड़ा; आखिरकार राजनैतिक क़ैदियोकी मांग सरकारको मंजूर करनी पड़ी। किन्तु बादमें सरकारने अरुणासे उनका बदला ले लिया। सरकारने अरुणाको अम्बाला जेल बदल दिया! जहाँ स्त्रियोंके लिए अलग जेल न थी। अरुणाको वहाँ एकान्तवास भुगतना पड़ा।

उसके बाद सबसे बड़ी जानने लायक बात यह है कि अगले दस साल तक अरुणाने राजनीतिमें कोई हिस्सा न लिया; छुटकारेके लिए भी रोज बरोज जो कोशिशें होती थीं उनसे भी वे अलग ही रहीं। किन्तु वह समय साधनाका था जब उनका मुख्य काम पढ़ना, अभ्यास करना, और मनन करना था।—उन्होंने तब कॉंग्रेसकी कमजोरियोंको अति निकटसे देख लिया और तब स्वतन्त्रता के लिए एक नया कार्यक्रम और पद्धति सोची। उन्हें 'भारत छोड़ो, के भीषण दिनोंमें अपनी पद्धतिको आज़मानेका मौका मिला; साथ ही साथ श्री० जयप्रकाशनारायण, अच्युत पटवर्धन और डा. राममनोहर लोहिया जैसे वीरोंके साथ कार्य करनेका अवसर भी आया। प्रसिद्धि में नहीं तो वीरतामें उन्हें वहाँ सब साथी अपने जैसे ही मिले थे। उस वक्त वे अपने कर्त्तव्य पर अडिग रहीं इतना ही नहीं चारों ओरसे उनकी प्रशंसाके पुष्प बरसने लगे। उन्होंने अपनी असाधारण निर्भयता और ख़तरेकी पर्वाह न करने वाले साहससे भारतके वीरतापूर्ण इतिहासमें एक नया अध्याय जोड़ा है। वे कहती हैं—मेरे अज्ञातवाससे प्रकाशमें आनेके बाद मेरी यात्राओं को मैं बहुमूल्य सबक कहूँगी। आज जनता आन्दोलन और मुक़ाबलेके द्वारा वर्तमान शासनकी अवहेलना करके आज़ादीको जल्दसे जल्द पाना चाहती है।

हम समझते होंगे उनके विशेष सूत्र अर्थपूर्ण न होकर, निरा शब्दाडम्बर होगा, किंतु, ऐसा नहीं है, उन सूत्रोंमें उनकी भावनाका प्रतिबिम्ब झलकता है। वे अपने नेताओंके नामके नारे लगाती हैं—'गांधीजीकी जय!' का नाद वे भाषणके प्रारम्भ और अन्तमें करती हैं, और प्रारम्भ और अंत के बीच सुभाष बाबू, पं. जवाहरलाल, शाहनवाज और सहगलके नामकी जय भी आ जाती हैं। ४२ की क्रांतिके शहीद उन्हें अधिक श्रद्धामय प्रतीत होते हैं, क्योंकि वे स्वयं और ने शहीद प्रायः एक ही ख़ून रखते हैं।

'यदि प्रचारका अर्थ ज्ञानको फैलाना हो, और हम मानते हों कि प्रत्येक व्यक्तिको साहित्यके द्वारा नहीं, बल्कि भाषणोंके द्वारा हमारी योजनाओंके समाचार मिलने चाहिए, तो हमें यह भी जानना चाहिए कि हमारे प्रमुख कार्यकर्त्ताओंका यात्रामें आने और जानेके सिवा कोई दूसरा उद्देश्य भी होता है।

भीड़का उत्साहपूर्ण नाद, शोरगुल, दर्शनके लिए धक्का-मुक्की और पैरों पड़नेकी आदत लोगोंमें अभी अभी आई है; यदि नेतागण इन बातोंका विरोध करें तो उन्हें अधिकार है कि वे लोगोंको ऐसा करनेसे रोकें, क्योंकि हमें अभी भी सच्चा अनुशासन और उसका सामाजिक मूल्य समझना चाहिए। पर यह कहावत भी है कि—'सब बातोंका अपना वक्त होता है!' इसलिए जिन नेताओंको बहुत दिनोंसे न देखा हो, तो जनता उनके दर्शनके लिए धक्का-मुक्की और हो-हल्ला मचा दे यह स्वाभाविक है। क्या उन्हें ऐसा करनेका अधिकार नहीं है? यदि सचमुच ही जनता उन लोगोंकी योजनाओंमें साथ न दे तो महानसे महान व्यक्तिकी भी उस वक्त क्या दशा होगी?

× × ×

दो रमणियाँ इन दिनों दिल्लीकी शान गिनी जाती हैं, किंतु सच पूछें तो ये दोनों सिर्फ दिल्लीकी न होकर सारे हिन्दुस्तानकी शान हैं। दोनोंने युवावस्थासे ही राष्ट्रीय कार्योंका श्रीगणेश किया था। आज इन दोनोंमेंसे एक श्री० सत्यवतीदेवी नहीं हैं, और श्री० अरुणा अज्ञातवासमेंसे पुनः प्रकट हुई हैं।

यह हम पहले ही बता चुके हैं कि, ४२ की ९ वीं अगस्टको अरुणा अचानक गायब हो गई थीं। कई सप्ताह वे दिल्लीमें रहीं; और स्थानीय अधिकारियोंके अत्याचारके विरुद्ध अहिंसात्मक प्रतिकार करनेका निश्चय किया। उस वक्त उन्होंने विद्यार्थियोंमें एक नया जोश भर दिया था; दिल्ली के ही विद्यार्थी लड़के-लड़कियोमेंसे उन्होंने कार्यकर्त्ताओंकी सुन्दर टोली बनाई। तब अरुणासे कोई मिलता न था; किंतु इनका प्रभाव, प्रेरणा और आदेश अहिंसक आन्दोलनमें दिखाई दे रहे थे।

दिल्ली छोड़नेके बाद अरुणा इधरसे उधर भटकती रहीं; इनके प्रकट और अदृश्य होनेके बारेमें बहुत सी बातें या अफवाहें उड़ती रही थी; और वह भी यहाँ तक कि एक बार लोगोंके मुँहसे सुना गया था कि वे एक ही वक्त छः अलग-अलग स्थानों पर दिखाई दी थीं। यह अफवाह भी उड़ी थी कि वे भारत छोड़कर सुभाष बोसकी आजाद हिन्द सेनामें शामिल हो गई हैं।

पुलिसने उन्हें ढूढ़नेकी तनतोड़ मेहनत की और इसी धोखेमें एक मिस्त्री, एक हवाई अफ़सर, एक गेरेज मालिक और सेक्रेटरिएटके आफ़िसर तथा इनके सिवा छः दूसरे व्यक्तियोंको, अरुणाके आश्रय देनेकी शंकाके नाम पर कई महीने जेलोंमें बिताने पड़े थे।

जब बॅरिस्टर आसफअली जेलसे छूटे तब पुलिस अधिकारियोंको स्वाभाविक ही यह शंका हुई कि शायद अरुणा अपने पतिसे मिलनेका प्रयास करेंगी, इस शंकाके पीछे उन्होंने कई हास्यास्पद भूलें और मूर्खताओंका प्रदर्शन किया।

जब श्री० आसफ़अली बीमारीकी हालतमें दिल्लीके वेलिंग्टन अस्पताल में थे तब, पुलिसको अचानक यह शंका हो गई कि इस वक्त अरुणा ही अपने पतिसे मिलने आई हैं, इस खबरसे बावली होकर एकाएक पुलिसने वेलिंग्टन अस्पताल पर छापा मारा; जब अस्पतालमें तलाश किया गया तब वह स्त्री अरुणा नहीं बल्कि उनकी छोटी बहन पूर्णिमा बॅनर्जी थीं।

दूसरी बार एक चालाक पुलिस अधिकारीको यह सनक सवार हुई कि श्री० अरुणाने अपने रोमान्समें नया परिवर्तन किया है और वे नर्सकी पोशाक पहनकर अस्पतालमें अपने पतिकी सेवा सुश्रूषा कर रही हैं। जब श्री०

आसफ़अली बम्बईसे हवाई जहाजके द्वारा शिमला गये तब जो नर्स उनके साथ गई थी, वह सचमुच नर्स ही थी या और कोई इसका पता लगानेके लिए काफ़ी दौड़-धूप की गई ; अन्तमें एक तरकीबके ज़रिये उस नर्सकी लम्बाई भी मापी गई, और जब पुलिसने यह जाना कि उसकी ऊँचाई अरुणा से दो इंच कम है, तब ही उसे शांति हुई ।

सबसे अधिक आश्चर्यजनक और घृणात्मक प्रयास पुलिसने वायसराय भवनके आगे तब किया जब उसे यह शंका हुई आसफ़अलीके साथ उनके मित्र श्री भीमानीकी पत्नी श्रीमती भीमानी ही थी या अरुणा ? एक तरकीब के द्वारा उस पुलिस अफ़सरने, वायसराय भवनमें होनेवाली चाय-पार्टीके वक्त श्रीमती भीमानीके बिलकुल सामने अपनी बैठक पसन्द की । अपनी जेबमेंसे श्रीमती अरुणाका फोटो निकालकर जब वह श्रीमती भीमानीसे मिलाने लगा तब उसे बहुत घबराहट उत्पन्न हुई यह जानकर कि यदि किसीके चेहरे एक दूसरेसे सबसे ज्यादा मिलते हो तो वह थीं श्रीमती भीमानी, और श्रीमती आसफ़अली ! अन्तर सिर्फ इतना ही था कि श्रीमती भीमानी श्रीमती अरुणा से दो ही इंच बड़ी थीं ।

जब सचमुच श्रीमती अरुणा अपने मुँहसे अपनी बीती हुई साहसभरी कहानियाँ कहेंगी, तब वह अत्यधिक रहस्यमय और संसारकी एक अद्भुत कहानी होगी ।

हममेंसे बहुतोंको उनसे मिलने और उनकी उस महाकथाके एक भागको जाननेका सौभाग्य मिला होगा, फिर भी वह एक ऐसी रहस्यमयी कहानी है जिसे उनके सिवा कोई भी सम्पूर्णता और उत्तमताके साथ पेश नहीं कर सकता । यह एक ऐसी कहानी है जिसमें तीन वर्षकी कठिन यातनाओं, भीषण साहस, अल्प प्रसन्नता और गहन निराशासे बनी हुई जनकीर्तिका समावेश होता है । ये और ऐसे साहसी व्यक्ति ही तीन तीन वर्षके अंधकार पूर्ण जीवनको सफलतापूर्वक बिता सकते हैं, और यह सब सहन करने पर भी जिनके मुख पर चिंता या उदासीकी एक रेखा भी प्रकट नहीं होती ! कुछ ही दिनों पहले स्वतंत्र-भारतके पहले आभासकी तरह दिल्लीके कमिश्नरने वीरां-

गनाकी गिरफ्तारीका वारंट रद्द कर दिया है। उनके द्वारा सरकारके प्रति किये गये तथाकथित 'गुनाहों' में दो ही मुख्य थे—एक गैर कानूनी साहित्य प्रकाशित करना, दूसरे निश्चित अवधिमें सरकारकी शरणमें न आना!

इनके छुटकारेका समाचार देशमें विद्युत वेगसे फैल गया। पहले पहल वे कलकत्तामें प्रकट हुईं और वहाँसे स्वतंत्रता-दिवसके अवसर पर दिल्ली पहुँचीं। जनताने दोनों जगहों पर इनका अपूर्व स्वागत किया। भारतमाताकी यह विद्रोहिणी पुत्री साढे तीनवर्षके अज्ञातवासके बाद पुनः जनता जनार्दनमें सम्मिलित होनेके लिए मुक्त हुई थी।

जिसने लोकक्रांतिके समय जनताका नेतृत्व करके क्रांतिके द्वारा सरकार के विरुद्ध थोड़ी बहुत सफलता प्राप्त की, वह यदि पुरानी राजनीतिको पसन्द न करे तो यह स्वाभाविक ही है। अज्ञातवासके आशंका भरे तीन वर्ष गुजारनेके बाद वे राष्ट्रके लिए अपनी जवाबदारियोंके लिए अधिक सचेत और जागृत हैं। फिर भी महात्माजी कहते हैं कि उनकी जबानको संयमकी जरूरत है। अब उनकी आगामी प्रवृत्तियाँ और अधिक प्रेक्षणीय होंगी।

परिशिष्ट

कुछ ही दिनों पहले बम्बई और करांचीमें जो नाविक-विद्रोह हुआ था तब बम्बईमें उपस्थित होनेके कारण अरुणाने नाविकोंकी माँगोंके प्रति सहानुभूति प्रदर्शित करके उन्हें प्रोत्साहन दिया था। महात्मा गांधी, ने 'हरिजन' में अरुणाके इस रुखके प्रति टीका-टिप्पणी की, और अरुणाके उस प्रोत्साहनको अविवेकपूर्ण और अनुचित बताया। कुछ ही दिन पहले नई दिल्लीमें ता. ४ अप्रैल ४६ को उन्होंने एक पत्र गांधीजीको इस बारेमें दिया था उसका सार ज्योंका त्यों यहाँ दिया जा रहा है—

'यों तो मैं आपके तर्कोंका प्रतिवाद नहीं करना चाहती, किंतु मेरे प्रतिरोध-विषयक तार्किक आधारोंपर, जो आपने अभी हालमें प्रहार किया है उससे मैं कुछ कहनेको बाध्य हुई हूँ; इसके लिए मैं तनिक भी दुःख महसूस नहीं करती। हाँ, घटनाओंके सम्बन्धमें मेरे फ़सलोंपर आपके विश्वासका अभाव देखकर मैं ज़रूर हैरतमें आ गई। अगर आप मेरे दिमाग़ और मुँहमें एक विशेष प्रकारके सिद्धान्तों और विचारधाराओंको जबर्दस्ती ठूँसनेका इरादा करते हों तो मैं यही कहूँगी कि उस व्यक्तिको आप उपेक्षित ही कर दीजिए, जो आपकी दृष्टिमें एक बकवासी बेवकूफसे अधिक और कुछ नहीं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि मैं अपने उन तमाम सहयोगियोंकी तरफसे बोलनेका अपना कर्त्तव्य और सौभाग्य समझती हूँ, जो मेरी विचारधाराओंसे पूर्णरूपसे सहमत हैं; परन्तु, अभाग्यकी बात है कि उन्हें वह आजादी प्राप्त नहीं है जिसकी हकदार मैं किसी क़दर बन गई हूँ; खैर, यह तो विषयका एक दूसरा पहलू है। दस मार्चके 'हरिजन' में आपने लिखा है कि नाविक-हड़तालके विषयमें मेरी धारणा काँग्रेसके मौलिक सिद्धान्तोंके सर्वथा प्रतिकूल और अवांछनीय है। प्रस्तुत विषयमें एक औसत काँग्रेसकी 'विचारधाराओं' की जहाँ तक मुझे व्यक्तिगत जानकारी है उसके आधारपर मैं कहूँगी कि आपको बिलकुल ग़लत समाचार दिये गये। आप कहते हैं और सन् १९२०

के अधिवेशनमें अ० भा० काँग्रेसका यह प्रमुख प्रस्ताव भी था कि अहिंसात्मक कार्य-प्रणालीका गुर है—अपमान-जनक बातोंसे असहयोग करना।' क्या सितम्बर १९४५ का संभवित सहयोगवाला प्रस्ताव इसीलिए पास किया गया कि जिन अपमान-जनक परिस्थियोंने सन् १९४२ में 'भारत-छोड़ो' प्रस्तावका आह्वाहन किया था, उनका अस्तित्त्व नष्ट हो चुका है? यदि किसी विशिष्ट कार्य-प्रणालीकी सामयिकता तथा काल और परिस्थितिपर विचार होता है!' जैसे सन् ४५, सन् ४२ नहीं है—तो यह तर्क ब्रिटिशोंपर भी लागू होना चाहिए था। नाविकों द्वारा संयुक्त-इस्तीफ़ा दाखिल करनेके बजाय और प्रकारके असहयोगकी शरण जाना क्या इस बातका प्रत्यत्त प्रमाण नहीं है कि एक इस तरहकी नौकरी जो स्पष्ट रूपसे भारतको गुलाम बनाये रखनेके लिए संगठित की गई, के कर्मचारी गुलामीके वातावरणसे पैदा हुए उस भयसे बहुत ऊँचे उठ चुके हैं? क्या गुलामीके अनुशासनको अनैतिक घोषित करना गलत है, पाप है?

आपने आजीवन विदेशी शासनके विरुद्ध विद्रोह करनेका पा हम भारतीयोंको पढ़ाया है। क्या आपको उन सशस्त्र सैनिकोंका, आज़ ीकी लड़ाईमें अनिश्चित किन्तु ज़ोरदार कदम सह्य नहीं? क्या आपको ज नसे शिकायत है?

आपने मुझपर यह आरोप लगाया है कि पद-ग्रहण करनेवाले काँग्रेसियोंकी बाबत यह कहा है कि वे नाविकोंको उनकी नौकरीपरसे वापस नहीं बुला सकते? बात यह है कि सत्ता हस्तान्तरित होना जब अधूरा है तो काँग्रेस मन्त्रि-मंडल निश्चय ही नौकरशाहीके हाथमें खिलवाड़ रहेगा। आपके अनुसार ऐसे काँग्रेसी देशकी वास्तविक सेवा करेंगे। अगर वे वार्निश किये हुए कोर्टमें ऐसा कर सकते हैं तो कोई कारण नहीं कि सम्राटकी सरकारका एक अदना सिपाही कुछ कारगर न हो। जीविकाके लिए नौकरी करना कोई वीरताका काम नहीं है, मैं मानती हूँ। किंतु अगर इस तरहका श्रमजीवी अपने अपमानमें देशका अपमान मानता है तो मेरी समझमें नहीं आता कि आप उसे 'खिलाफ़त' करनेका अधिकार क्यों नहीं देते? 'विद्रोह' शब्दका सेनामें विशेष महत्त्व है; उनका कोई भी प्रतिकूल विद्रोह हो सकता है।

इस्तीफ़ा देनेसे तो वह भगौड़ा कहा जाएगा । यह है रेटिंगोंके हड़तालकी व्याख्या !

आप क्या मेरे इस लम्बे उत्तरके लिए मुझे क्षमा न करेंगे ? '

—:÷:—

बड़ी प्रसन्नताकी बात है कि वीरांगना अरुणाने अपने अज्ञातवासके पश्चात्के भाषणोंने समाजवादी नेताओंके छुटकारेके लिए सरकार और विशेष कर काँग्रेसके लिए जो निवेदन और वक्तव्य दिये थे; वे विभिन्न प्रांतोंमें काँग्रेसी-मंत्रिमंडलोंकी स्थापनाके बाद ही छोड़ दिये गये हैं, इस तरह अरुणाका काँग्रेसीमंत्रिमंडलोंकी स्थापनाके प्रति जो अविश्वास था वह एक तरहसे दूर-सा हो गया है ।

बंबईमें काँग्रेसी-मंत्रिमंडलकी स्थापनाके बाद ता. ३ अप्रेलको प्रसिद्ध समाजवादी कार्यकर्तृ कुमारी उषामेहताको छोड़ दिया गया; साथ ही प्रसिद्ध अज्ञातवासी नेतागण श्री० अच्युत पटवर्धन और छोटूभाई पुराणी आदिका वारन्ट भी रद्द किया गया ।

मंत्री-मिशनसे गांधीजीकी वार्ताके फलस्वरूप समाजवादी नेता श्री० जयप्रकाशनारायण और डॉ. राममनोहर लोहिया, ता. ११ अप्रेल १९४६ को आगरा सेंट्रल जेलसे छोड़ दिये गये हैं ।